"मैं आ गया बूआजी !" उसी समय एक बड़ा गट्ठर पीठ पर उठाये शेरसिंह उस जगह आ मौजूद हुए । बूआजी ने पूछा, "इस गठरी में क्या ले आए तुम शेरसिंह ?" शेरसिंह ने जवाब दिया, "राजा साहब को बेहोश करके उठा लाया हूं । समझाने बुलाने से वे किसी भी तरह न माने और मरने मारने पर मुस्तैद हो गए इससे लाचार यही करना पड़ा ।" बूआजी बोलीं, "तो इसको क्या करोगे अब?" शेरसिंह ने जवाब दिया, "आपसे अर्ज करूंगाकि इनको किसी हिफाजत की जगह बन्द कर दीजिए जहा कुछ दिन शान्तिसे रहने से शायद इनको अक्ल आ जाय और दिमाग ठिकाने हो !"

बूआजी के मुंह से निकला, "मगर ऊपर किले में ...?" शेरसिंह बोले, "एक लाश इन्हीं की सूरत और पौशाक में छोड़ आया हूं । राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह जब महल में पहुंचेंगे तो यही समझेंगे कि इन्होंने आत्महत्या कर ली ।" बूआजी कुछ देर तक चुप रहीं तब धीरे धीरे बोलीं, "यह बड़ा भारी दुष्ट है शेरसिंह !" शेरसिंह हाथ जोड़कर बोले, "बूआजी, नमक खा चुका हूं!अब इतनीही प्रार्थना है कि इनकी जान बख्श दी जावे !" बूआजी ने एक लम्बी सांस खींचीऔरकहा, "अच्छातोलेचलो इसे फिर उसी सिंहासन पर, मैं समझती हूं वह अभी तक वापस नहीं लौटा होगा, तिलिस्मके अन्दरही कोई ठिकाना इसके लिए खोजा जायगा।"

बूआजी उठ खड़ी हुईं और उस तरफ रवाना हुईं जिधर से यहाँ आई थीं और उनके पीछे पीछे बाकी के सब लोग भी चल पड़े । उस समय मैना ने धीरे से कहा, "मगर एक काम रहा जाता है ।" बूआजी ने पूछा, "क्या काम ?" मैना बोली, "चौबीस नम्बर वाली कोठरी जिसमें रिक्तग्रन्थथा...!" बूआजीलम्बी सांस लेकर बोलीं, "मैं उस कोठरी में देख आई, वहां कुछ नहीं है, मालूम होता है कोई उस किताब को मार ले गया !"

सब कोई कुछ देर चुप रहे, इसके बाद बूआजी आगे बढ़ीं और सब लोग उनके पीछे पीछे रवाना हुए ।

॥ पांचवां भाग समाप्त ॥

१४ वां संस्करण } १९८५ ई० { २२०० प्रति
लहरी प्रेस, वाराणसी ।

॥ श्रीः ॥

रोहतासमठ

छठवां भाग

पहिला बयान

उसी संगमर्मर वाली बारहदरी की सीढ़ियों पर बैठे हुए—जिसे हम फुहारों वाले बाग में पहिले कई दफे देख आये हैं—गोपालसिंह अपनी तिलिस्मी किताब बड़े ध्यान से पढ़ रहे हैं । उनके सामने जो पृष्ठ है उसका मजमून यह है:—

"......हम पहिले कई जगह बता आए हैं कि इस तिलिस्म को वही तोड़ सकेगा जो केवल शरीर से ही बलशाली नहीं वरन् सब तरह की कलाओं में भी निपुण होगा । इस जगह तुम्हें शतरंज की चालें देखनी और दिखानी होंगी । जब तुम उस बड़े कमरे में पहुंचोगे, तुमको कई पुतलियाँ मिलेंगी जो तुम्हें शतरंज खेलने को बुलावेंगी । अगर तुम अपनी चालों से उन्हें मात दे सकोगे तो वे तुम्हारी सहायक बन कर आगे का रास्ता बता देंगी, पर यदि तुम ऐसा न कर सकोगे तो तुम्हें उस गुफा की खोज में बहुत समय तक भटकते रहना पड़ सकता है......."

गोपालसिंह ने झटके से किताब बन्द कर दी और बोले, "तिलिस्म है कि आफत ! परीक्षाएँ ही देते देते मैं सूखा चला जा रहा हूं ! खुशबू कौन चीज की है सो बताओ, राग में क्या गलती है सो बताओ, दौड़ने में तेज हो, उछलने कूदने में तेज हो, क्या क्या न जानता हो, और अब लो शतरंज का भी पक्का खिलाड़ी हो ! वह तो कहो मुझे लड़कपन में शतरंज से बहुत शौक था इसलिए उसे कुछ समझता हूं नहीं तो यहाँ भी मुंह की खानी पड़ती । अच्छा बाबा, रखो फिर !"

किताब जेब के हवाले कर गोपालसिंह ने अपना बाकी का सब सामान सम्हाला और उठ खड़े हुए—सीढ़ियों से नीचे उतरे और पश्चिम की तरफ बढ़े जिधर से एक लम्बी चौड़ी इमारत की बड़ी खिड़कियां नजर आ रही थीं।

चौड़ी चौड़ी कई डण्डा सीढ़ियां चढ़ कर गोपालसिंह इस इमारत के सदर दर्वाजे के पास पहुंचे जो बहुत आलीशान और खूबसूरत बना हुआ था। फाटक के आगे पीतल या किसी अन्य धातु के बने चार सिपाही खड़े हुए थे जिन्होंने गोपालसिंह को आते देखते ही उनका रास्ता रोका मगर उन्होंने अपनी तिलिस्मी तलवार से उनके सिर किसी विशेष क्रम से छू दिए और वे फौजी सलाम कर सामने से हट गए, फाटक खुल गया, गोपालसिंह उसके भीतर चले गए, साथ ही फाटक फिर बन्द हो गया।

एक बहुत बड़े कमरे में गोपालसिंह ने अपने को पाया जो तरह तरह के सामानों से भरा हुआ था, मगर और किसी तरफ ध्यान न दे गोपालसिंह सीधे सामने की तरफ बढ़े जहाँ कमरे के बीचोबीच एक रेशमी गालीचे पर कुछ औरतें बैठी हुई न जाने क्या कर रही थीं। पास पहुंचे तो मालूम हुआ कि शतरंज बिछी हुई है और खेलने वालियां उस खेल में ऐसी मशगूल हो रही हैं कि उनको गोपालसिंह के आने की जरा भी खबर नहीं हुई। गोपालसिंह आगे बढ़ कर एक तरफ खड़े हो गए और चुपचाप खेल देखने लगे। कुछ ही देर में उन्हें मालूम हो गया कि उन कई औरतों (या पुतलियों) में से एक खेलने में बहुत तेज है जिसे बाकी की सब राजकुमारी के नाम से सम्बोधित करती हैं; और वह सभी को धड़ाधड़ मात पर मात देती जा रही है।

आखिर एक पुतली झुंझला कर बोली, "राजकुमारी, तुम्हारे साथ खेलना व्यर्थ है। तुमको कोई जीत नहीं सकता, हटाओ गोटियों को, अब हम लोग नहीं खेलेंगी!" राजकुमारी बोली, "अच्छा एक आखिरी बाजी और हो ले!" उसने जोर से सिर हिला कर कहा, "नहीं हम अब नहीं खेलेंगी!" पर इसी समय गोपालसिंह बोल उठे, "अच्छा मेरे कहने से एक बाजी और खेल लो। जरा मैं भी तो तुम्हारी राजकुमारी का खेल देखूं!"

पुतली चमक कर घूमी और गोपालसिंह की तरफ देख कर बोली, "तुम कौन? और यहाँ जनाने महल में बेधड़क कैसे चले आए!" गोपालसिंह ने हँस कर कहा, "मुझे किसी ने रोका नहीं इससे चला आया, मगर तुम समय बर्बाद न करो और यदि अपनी राजकुमारी को जीतना चाहती हो तो एक बाजी और

खेल के मेरी मदद से अपनी मंशा पूरी कर लो नहीं यह मौका हाथ से जाता रहेगा!" वह सिर हिला कर बोली, "नहीं, हमारी राजकुमारी से शतरंज में कोई नहीं जीत सकता, ये हारना जानतीं ही नहीं!" गोपालसिंह बोले, "अच्छा जरा खेल शुरू तो करो!" एक दूसरी यह सुन बोली, "जब ये इतना कहते हैं तो एक बाजी और भी खेल के देख ही लो?" पहिली बिगड़ कर बोली, "और रानी अगर देख लें कि हम लोग पराए मर्द के साथ शतरंज खेल रही हैं तो गर्दन कौन कटावेगा? तुम कि मैं?" गोपालसिंह यह सुन हँस के बोले, "रानी अगर देख भी लेंगी तो कुछ न बोलेंगी इसका जिम्मा मेरा, और अगर उनका ऐसा ही डर है तो लो मैं उनके आने का रास्ता ही बन्द कर देता हूं!"

गोपालसिंह ने अपने पास से एक ताली निकाली और राजकुमारी के पीछे वाले एक बन्द दर्वाजे के छेद में डाल कर उसे घुमा दिया। उन पुतलियों ने इन्हें ऐसा करते देख ताज्जुब की निगाहों से एक दूसरे की तरफ देखा और एक ने धीरे से कहा, "इनके पास तिलिस्मी ताली कैसे आई?" दूसरी बोली, "जरूर कोई जानकार आदमी हैं, ताज्जुब नहीं हमारे राजा साहब के कोई परिचित हों!" तीसरी बोली, "खैर कोई भी हों, अब रानी के आने का डर तो रहा नहीं, तब बाजी होने ही दो! यह भी क्या कहेंगे! हमारी राजकुमारी बिना इन्हें भी मात दिये नहीं रहेंगी!" चौथी ने गोटियां बिछाते हुए कहा, "बेशक ऐसा ही होगा।"

शतरंज बिछ गई और गोपालसिंह ने उस पुतली से जिसे बाकी सब राजकुमारी पुकारती थीं कहा, "चलिए!" उसने एक प्यादे पर हाथ रक्खा और तब एक सखी की तरफ घूम कर कहा, "मगर पहिले इनसे कुछ बाजी तो बद लो?" वह बोली, "तुम ही कहो।" राजकुमारी ने जवाब दिया, "अगर मैं जीत जाऊँगी तो वह ताली ले लूंगी जिससे इन्होंने अभी अभी महल का रास्ता बन्द किया।" गोपालसिंह हँस कर बोले, "अच्छी बात है, अगर मैं हार गया तो वह ताली दे दूंगा लेकिन अगर तुम हार गईं तब 'शेरों वाली गुफा' की राह मुझे दिखा देनी होगी!"

राजकुमारी के मुँह से ताज्जुब के साथ निकला—"शेरों वाली गुफा!" तब उसने कहा, "अच्छा मैं वहाँ तक जाने की राह आपको बता दूंगी, मगर वह कैसी जगह है यह आप जानते हैं?" गोपालसिंह बोले, "मैं बखूबी जानता हूं।" और तब एक पुतली की तरफ देख कर बोले, "तुम खेल शुरू करो, मौके

पर मैं तुम्हारी मदद करूँगा।"

खूब जम के खेल हुआ और आखिर दो घण्टे की कड़ी माथापच्ची के बाद गोपालसिंह उस राजकुमारी को मात देने में सफल हुए। सखियाँ खुश होकर ताली बजाने लगीं और उस राजकुमारी ने सिर झुका कर कहा, "बेशक आप बहुत अच्छा खेलते हैं!" गोपालसिंह बोले, "और मैं तुम्हारे खेल की तारीफ करता हूं! अगर बेमौका न रहता तो जरूर दो एक बाजी तुमसे और खेलता; मगर लाचारी है। अब तुम अपना वादा पूरा करो और मुझको उस जगह का रास्ता बता दो। इसके बाद तुम अपने काम में लगो और मैं अपनी धुन में जाऊँगा।" राजकुमारी यह सुनते ही उठ खड़ी हुई और अपनी सखियों से यह कह कर कि 'तुम लोग बैठो, मैं इन्हें वह जगह दिखा कर अभी आई' गोपालसिंह से बोली, "मेरे पीछे पीछे आइये।"

उस बड़े कमरे को पार कर राजकुमारी एक दर्वाजे के पास पहुंची जो कमरे के दक्षिण वाली दीवार में बना हुआ था। गोपालसिंह भी साथ थे। राजकुमारी ने किसी तर्कीब से उस दर्वाजे को खोला और उसके अन्दर घुसी, गोपालसिंह भी पीछे पीछे चले। एक लम्बी सुरंग जैसी जगह में इन्होंने अपने को पाया जिसमें ऊपर की तरफ बने हुए कई सूराखों की राह हवा और रोशनी बखूबी आ रही थी। राजकुमारी तेजी के साथ इस सुरंग में चलने लगी और गोपालसिंह उसके साथ हुए।

कुछ दूर जाने के बाद एक दर्वाजा पड़ा और राजकुमारी ने उसको खोला; आगे पुनः सुरंग नजर आई और दोनों उसमें चलने लगे। इसी तरह बारी बारी से चार दर्वाजे मिले और सभों को खोलती हुई पुतली बढ़ती चली गई। जब आखिरी पाँचवाँ दर्वाजा उसने खोला तो सामने एक खुला मैदान नजर पड़ा जिसके बीचोबीच बने एक बनावटी पहाड़ की तरफ बता कर उसने कहा, "वह देखिये शेरों की गुफा उसी जगह है। अब आप जानिये और आपका काम, मैं चली।" गोपालसिंह खूब गौर से उस बनावटी पहाड़ को देख कर बोले, "बेशक यही जगह है और अब तुम खुशी से वापस लौट जा सकती हो, मगर मेरे ऊपर कृपा कर क्या मेरे दो एक सवालों का जवाब देती जा सकती हो?"

पुतली कौतूहल के भाव से बोली, "समय बहुत कम है फिर भी पूछिये क्या पूछते हैं?" गोपालसिंह बोले, "मैं यह जानता हूं कि तुम लोग सचमुच की औरतें नहीं हो और मसाले तथा पुर्जों की बरकत से बनी पुतलियाँ मात्र हो, पर

फिर भी तुम लोगों को जिस तरह के काम करते मैं देखता हूँ उससे मेरी बुद्धि चकरा जाती है। आखिर वह कौन सी ताकत है जो तुम लोगों से जीते जागते मनुष्य का सा काम ही केवल नहीं लेती बल्कि तुम्हें सोचने और विचार करने को भी प्रेरित करती है?"

पुतली हँसी और कुछ देर चुप रही, इसके बाद बोली, "ऐसा ही सवाल आज के बहुत समय पहिले जो एक बहादुर आया था उसने भी मेरी एक दूसरी सखी से किया था और ठीक जवाब पाया था। आप अगर उस बहादुर से कभी बातें करेंगे तो वह सब रहस्य जान जायेंगे।" गोपालसिंह ताज्जुब से बोले, "वह कौन था?" पुतली बोली, "उसका नाम प्रभाकरसिंह था!" गोपालसिंह के मुँह से निकला "ओह!" और तब वे कुछ रुक कर बोले—"मैं जरूर उनसे इस विषय में बातें करूँगा मगर क्या तुम कुछ इशारा भी मुझे नहीं दे सकतीं कि यह क्या रहस्य है?" पुतली कुछ रुक कर बोली, "अब समय बिल्कुल नहीं है, वह देखिये फाटक खुलने लगा और अब कुछ ही देर में सिपाही यहाँ आ पहुंचेंगे। फिर भी मैं संक्षेप में इतना कह सकती हूं कि मसालों और कल पुर्जों के जोर से जिस तरह इस तिलिस्म के बनाने वाले महात्माओं ने हमारे शरीर का निर्माण किया उसी तरह अपनी विद्या के बल से हमारे अन्दर एक आत्मा और एक अन्तःकरण भी बैठाने में वे समर्थ हुए, अवश्य ही वैसा तो नहीं जो जीते जागते मनुष्यों के अन्दर काम करते हैं पर उससे बहुत कुछ मिलता जुलता। इससे हम लोग कुछ छोटे मोटे काम कर सकती हैं। अच्छा अब आप जाइये, देखिये वे लोग आ रहे हैं, मैं चली।"

वह पुतली पीछे हट कर उसी दर्वाजे के अन्दर चली गई जिसमें से गोपालसिंह को लेकर आई थी और वह दर्वाजा पुनः बन्द हो गया। गोपालसिंह ने घूम कर देखा और बगल की एक इमारत के अन्दर से निकल रहे सिपाहियों को अपनी तरफ आते देख अपनी तिलिस्मी तलवार निकाल उस तरफ बढ़ते हुए बोले, "शतरंज खेल चुका अब तलवार के जौहर दिखाऊँ!! तिलिस्म है न!"

वे सिपाही जो गिनती में दस बारह होंगे, कुछ अजीब रंग ढंग के थे। देखने में तो वे बड़े ताकतवर और गठीले जान पड़ते थे मगर उनकी पोशाकें या उनके हथियार कुछ अजीब ढंग और किसी बड़े ही पुराने जमाने के नजर आ रहे थे जैसे कि अभी तक कभी गोपालसिंह के देखने में न आए थे और सभी के बदन

---

* देखिए भूतनाथ अठारहवाँ भाग, चौथा बयान।

और चेहरे भी बड़े ही काले और डरावने थे। गोपालसिंह अपनी जगह पर रुक गए और बड़े गौर से इन सिपाहियों की तरफ देखने लगे जो सीधे उन्हीं की तरफ बढ़े आ रहे थे।

और सिपाही कुछ पीछे थे पर उनमें से एक जो सभों में ताकतवर और बहादुर जान पड़ता था, सरदारी के तौर पर सभों से कुछ आगे आगे आ रहा था। जब ये सब गोपालसिंह के पास पहुंच गये तो इस सरदार ने पीछे घूम कर कुछ इशारा किया जिससे वे बाकी के तो वहीं रुक गए और यह दो कदम आगे बढ़ कर गोपालसिंह से बोला, "तुम कौन हो और यहाँ क्यों आए हो?" कुछ मुस्कुराते हुए गोपालसिंह ने जवाब दिया, "मैं इस तिलिस्म का राजा हूं और उस शेरों वाली गुफा में जाने के लिए यहाँ आया हूं।" उसने जवाब दिया, "हम लाग कैसे जानें कि तुम तिलिस्म के राजा हो?" अपने हाथ की तलवार दिखाते हुए गोपालसिंह बोले, "यह मेरी बात की ताईद करेगी।" वह बोला, "इसका क्या मतलब?" गोपालसिंह ने जवाब दिया, "सिर्फ यही कि तुमको अगर मेरे कहे का यकीन न हो तो मुझसे लड़ कर देख लो।" वह सिपाही बोला, "मेरा इरादा तो नहीं था लेकिन अगर तुम ऐसा ही चाहते हो तो मैं तैयार हूं, आओ दो हाथ हो जाय!"

उस काले नौजवान ने भी अपनी तलवार निकाल ली और गोपालसिंह तथा उसमें तलवार के हाथ होने लगे। इसमें शक नहीं कि गोपालसिंह तलवार के फन में काफी होशियार थे और उन्होंने अच्छा जौहर दिखाया मगर वह नौजवान भी कुछ कम न था और कुछ ही देर बाद गोपालसिंह समझ गये कि इस जगह पूरी ताकत और हुनर दिखाने की जरूरत पड़ेगी। आखिर काफी देर बाद उनको मौका मिला कि अपनी तलवार की चपेट में लाकर❋ उन्होंने उस नौजवान की तलवार उसके हाथ से खींच के दूर फेंक दी और उसकी छाती से अपनी तलवार की नोक लगाते हुए बोले, "अब कहो!"

वह नौजवान सिर झुका कर बोला, "मैंने हार मंजूर की, बेशक आप तिलिस्म के राजा होने योग्य हैं!" साथ ही उसने पीछे घूम कर विचित्र भाषा में अपने साथी सिपाहियों से कुछ कहा जिससे वे सब के सब भी जमीन की तरफ झुक गए, मानों अपने राजा का अदब कर रहे हों। इसके बाद वह नौजवान बोला, "मैं

❋ गोपालसिंह के हाथ में इस समय भी वही तिलिस्मी तलवार है जिसके करतब पाठक पहिले देख चुके हैं।

आपकी ताबेदारी मंजूर करता हूं और जो कुछ हुक्म होगा उसे बजाऊंगा।" गोपालसिंह यह सुन बोले, "मैं उस शेरों की गुफा में जाना चाहता हूं जहाँ मुझे एक जरूरी काम करना है! तुम अगर इस मामले में मेरी कुछ मदद कर सकते हो तो करो!" नौजवान ने पूछा, "आप वहाँ जाकर क्या काम करना चाहते हैं?" गोपालसिंह ने जवाब दिया, "सिवाय तिलिस्म तोड़ने के और मुझे करना ही क्या है?" नौजवान बोला, "वह कैसी भयानक जगह है आप जानते हैं?" गोपालसिंह बोले, "अच्छी तरह।" नौजवान ने सिर हिला कर कहा, "नहीं आप नहीं जानते, और इसी से वहाँ जाने की बात कहते हैं। मगर खैर, मुझमें इस बारे में कुछ कहने की शक्ति नहीं है, हाँ यह सलाह आपको जरूर दूंगा कि अगर आप वहाँ जाना ही चाहते हैं तो एक बार वह मजमून पढ़ लें।"

नौजवान ने एक तरफ को उंगली उठाई और गोपालसिंह ने घूम कर देखा। दीवार में एक संगमर्मर के पत्थर पर कुछ अक्षर खुदे हुए देख उन्होंने पूछा, "क्या उन अक्षरों से तुम्हारा मतलब है?" वह बोला, "हाँ, उन्हें पढ़ कर आप अगर काम करेंगे तो आपको बहुत सुभीता होगा।" गोपालसिंह यह सुन उधर ही को बढ़े और वहाँ पहुंच कर उस मजमून को गौर से देखने लगे। यह लिखा हुआ था:—

त	से	त	तु	फ	मि	बाँ	जो
सू	से	र	चि	में	म	बू	म
न	रो	र	र	मो	घ	ता	को
थ	क	प	य	घु	भी	ज	उ
चा	मी	ही	त	ष	जा	मि	ली
ए	हा	उ	क	से	सो	स	ग
ज	के	ली	उ	ब	ह	पु	ली
के	से	ह	ड़	त	है	ह	प

कुछ देर गोपालसिंह इस मजमून पर निगाह दौड़ाते रहे। आखिर मतलब उनकी समझ में आ गया और वे खुश होकर बोले, "मुझे तर्कीब मालूम हो गई और मैं बेखटके उस गुफा में जा सकता हूं। मगर मैं चाहता था कि पहिले किसी जगह से इसके भीतर का दृश्य देखना। आखिर क्या बात है कि उस जगह का यह नाम रक्खा गया है!" नौजवान ने यह सुन कहा, "तब आप इधर आवें।" और आगे आगे चल पड़ा। गोपालसिंह पीछे हुए।

कई तरफ से घूमता फिरता वह नौजवान गोपालसिंह को उस बीच आंगन वाले पहाड़ के पिछली तरफ ले गया जहां उन्हें एक पतली पगडंडी पहाड़ी के ऊपर की तरफ जाती हुई नजर आई। आगे आगे वह नौजवान और पीछे पीछे गोपालसिंह इस पगडंडी पर चल पड़े और कुछ ही देर में उस पहाड़ी के ऊपर जा पहुंचे जो बहुत बड़ी तो न थी फिर भी ऊँची काफी थी।

चोटी पर पहुंच गोपालसिंह ने भीतर की तरफ झांका और साथ ही उन्हें अपने सामने एक डरावना दृश्य मालूम पड़ा। एक छोटा मैदान चारो तरफ से बनावटी पहाड़ियों से घिरा हुआ था जिसमें जगह जगह कई गुफाओं के मुहाने दिखाई पड़ रहे थे और उन गुफाओं से आते जाते या बीच के मैदान में घूमते हुए कितने ही भयानक और कद्दावर शेर चारो तरफ घूम रहे थे। बहुत देर तक गौर करने के बाद भी गोपालसिंह यह निश्चय न कर सके कि ये सचमुच के शेर हैं या कोई तिलिस्मी खेल है। आखिर उन्होंने उस नौजवान से पूछा, "ये क्या सचमुच जीते जागते शेर हैं या तिलिस्मी तमाशा है!"

मानों इनके सवाल के जवाब ही में एक कद्दावर शेर ने अपनी गर्दन घुमा कर ऊपर इनकी तरफ देखा और भयानक आवाज से गुर्राया। उसकी आवाज सुन और भी कई शेर चौकन्ने हुए और अपनी खूंखार आँखें ऊपर उठा और इनको देख गरजने और उछलने कूदने लगे बल्कि कई तो ऊपर वहाँ तक पहुंचने की कोशिश करते भी दिखाई पड़े मगर रास्ता न पाने से लाचार रह गये। गोपालसिंह कुछ देर तक कौतूहल से इन शेरों की तरफ देखते रहे, तब अपने साथी उस नौजवान से बोले—"क्या तुम बता सकते हो कि ये शेर असली हैं या बनावटी?" वह कुछ मुस्कुरा कर बोला, "महाराज जैसा मैं हूं वैसे ही ये सब भी हैं!" गोपालसिंह बोले, "यानी बेजान पुतले?" उस सिपाही ने छाती पर हाथ रख कर अदब से कुछ झुकते हुए कहा, "जी हाँ, महाराज।" कुछ रुक गोपालसिंह ने पुनः पूछा, "तब इनको कोई भोजन तो कभी न दिया जाता

होगा?" उसने जवाब दिया, "जो कुछ तिलिस्मी कायदा बतलाता है उसके सिवाय और कुछ कभी इनके साथ नहीं किया जाता।" फिर और कुछ न पूछ गोपालसिंह गौर से सब तरफ देखने लगे।

गोपालसिंह ने देखा कि इस बनावटी पहाड़ी के बीच वाले मैदान में एक बहुत छोटा तालाब बना हुआ है जिसके किनारे पर एक दूसरी बनावटी पहाड़ी बनाई गई है और उसके अन्दर एक गुफा नजर आती है। इस गुफा में से निकलता एक शेर उन्हें नजर आया और वे उसकी तरफ उंगली उठा कर आप ही आप बोल उठे, "जरूर यही वह शेरों वाली गुफा होगी जिसके अन्दर मुझे जाना है। मगर तिलिस्मी किताब में तो लिखा है कि उसके अन्दर जाने पर एक बाग मिलेगा पर यहाँ तो कोई बाग दिखाई नहीं पड़ता और हो भी कैसे सकता है, वह खंड पहाड़ी तो बिल्कुल छोटी सी है जिसके अन्दर बाग बगीचा तो क्या एक पेड़ भी होने की सम्भावना नहीं है!" गोपालसिंह ने अपनी जेब से तिलिस्मी किताब निकाली और उसे खोल कर देखा मगर कोई सन्तोष लायक उत्तर न मिला और वे सिर हिला कर बोले, "इससे और कुछ जाहिर नहीं होता, तब फिर वही करना चाहिये जो उस संगमर्मर की तख्ती पर लिखा था।" एक निगाह खूब गौर से अपने सामने और चारो तरफ डाल वे पीछे की तरफ लौटे और जिधर से ऊपर चढ़े थे उधर ही से उतरते हुए पहाड़ी के नीचे आ गए। इस समय वह नौजवान उनके साथ न था और बीच ही में न जाने किधर गुम हो गया था।

गोपालसिंह ने अपनी कमर से एक ताली निकाली और उसे किसी चीज से बांध अपने पीछे पीछे घसीटते हुए उस पहाड़ी के चारो तरफ का कई चक्कर लगा आए परन्तु आखिर एक जगह जब कि वे पहाड़ी से बिल्कुल सटे हुए जा रहे थे वह ताली एक शिलाखंड से चिपक गई। गोपालसिंह उसी जगह रुक गये और ताली को उठा कर ठिकाने रखने के बाद उस शिला की जाँच करने लगे। कुछ ही देर में उन्हें मालूम हो गया कि यह चट्टान पहाड़ के साथ जमी हुई या उसका कोई हिस्सा नहीं है बल्कि अलग से उस जगह रक्खी हुई है। उन्होंने जोर लगा कर देखा और उसको कुछ हिलता हुआ पाया, पूरा जोर लगाते ही वह एक तरफ को हट गई और उसके नीचे एक पतली सुरंग की तरह रास्ता नजर आया जिसमें उतरने के लिए कई डंडा सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। गोपालसिंह ने अपनी तिलिस्मी तलवार हाथ में ली और भगवान का स्मरण करते हुए उन्हीं सीढ़ियों

की राह उतरने लगे।

दस बारह डंडा उतर जाने के बाद एक लम्बी पतली सुरंग मिली और उसको पार करने बाद पुनः कुछ सीढ़ियाँ जिनके ऊपर से चाँदनी झलक मार रही थी। सब तरह से होशियार गोपालसिंह सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर पहुंचे और तब उन्होंने देखा कि वे उसी छोटे से तालाब पर निकले हैं जिसे ऊपर से देखा था या जिसकी बगल में वह शेरों वाली गुफा नजर आई थी।

जिस समय गोपालसिंह उन सीढ़ियों के बाहर आए शेर उसी तालाब में पानी के पास झुका हुआ जल पी रहा था जो इनको देखते ही जोर से दहाड़ उठा और उसकी आवाज सुन मैदान के शेर भी गरजने और इनकी तरफ बढ़ने लगे मगर गोपालसिंह ने अपना कलेजा मजबूत रक्खा और उनकी तरफ कुछ भी ख्याल न कर फुर्ती से चलते हुए उस गुफा के पास पहुंच गये जिसे ऊपर से देखा था। उनको गुमान था कि जरूर उस गुफा से निकलता हुआ कोई शेर उन्हें मिलेगा मगर ऐसा न हुआ और वे बेखटके गुफा के अन्दर घुस गये। उनके पीछे कई शेर झपटे और दहाड़ते हुए वहाँ तक पहुंचे मगर इनके गुफा के अन्दर चले जाने पर वे सब बाहर ही रह गये, कोई गुफा के अन्दर न घुसा।

जैसा कि बाहर से अनुमान हुआ था उसके विपरीत गोपालसिंह ने इस गुफा को गहरी लम्बी चौड़ी और कुशादा पाया और इसके अन्दर रोशनी भी भरपूर थी। जब उन्हें विश्वास हो गया कि बाहर वाले खौफनाक जानवरों में से कोई उन पर हमला करने की नीयत से यहाँ तक नहीं आ रहा है तो वे कुछ शान्त हुए और गहरी निगाह से इस गुफा के सब तरफ देखने लगे—मगर वह शान्ति जो शेरों को बाहर ही रहते देख कर उन्हें पैदा हुई थी क्षण भर में दूर हो गई और वे चमक कर एक तरफ को हट गये। उन्होंने देखा कि उनसे थोड़ी ही दूर पर एक बड़ा ही भयानक और कद्दावर शेर जमीन पर लेटा हुआ है और अपनी खूंखार आँखों से एकटक उन्हीं की तरफ देख रहा है। यकायक उनके मुँह से भय की आवाज निकल गई जिसे यद्यपि उन्होंने मजबूती से रोका फिर भी यह देख उनका कलेजा जोर से धड़क उठा कि पीछे की किसी जगह से निकल कर एक बड़ा भारी अजगर उनकी तरफ बढ़ रहा है और शेर से डर कर पीछे हटने की जल्दी में उनका भरपूर पैर उसी अजगर की दुम पर पड़ गया है जिससे क्रोध में आकर फुंकार मारता हुआ वह उनकी तरफ अपना भयानक फन उठा रहा है।

एक तरफ शेर दूसरी तरफ अजगर, वे जांय तो कहाँ जांय! गोपालसिंह जरा

देर के लिए घबड़ा से गए, पर तुरन्त ही अपने को सम्हाल उन्होंने अपनी तिलिस्मी तलवार निकाल कर हाथ में ले ली और बगल हट पत्थर की एक छोटी चट्टान पर कूद कर जा चढ़े जो उनको पास ही में नजर आई।

मगर यहाँ भी उनके लिए खैरियत न थी। एक शेरनी इस चट्टान के पिछले अँधेरे भाग में सोई हुई थी जो इनको वहाँ आता देख जोर से दहाड़ कर उठ बैठी और इनकी तरफ झपटी। गोपालसिंह के समझ में न आया कि अब वे किधर जांय। पीछे वह अजगर फुंकारता हुआ बढ़ा आ रहा था, नीचे वह कद्दावर शेर बढ़ रहा था, और सामने शेरनी खड़ी उन पर झपटना ही चाहती थी। उनसे और कुछ तो न बना पर वे जोर की एक उछाल मार कर एक दम उस शेरनी की तरफ कूद गये। किसी चिकनी और फिसलन वाली चीज पर उनका पैर पड़ा जिससे वह सम्हल न सके और जमीन पर गिर पड़े मगर गिरते गिरते उन्होंने देखा कि उस अजगर ने आगे बढ़ कर बहुत जोर की फुंकार के साथ हमला किया और वह शेरनी उस अजगर पर टूट पड़ी। कुछ ही देर में वह शेरनी और अजगर दोनों गुत्थमगुत्था हो गए। मगर केवल इतना ही नहीं था, अपनी जीवन संगिनी को संकट में पड़ा देख वह शेर भी आगे बढ़ा और उस अजगर पर पंजे चलाने लगा जिसने अपनी दुम उसके पिछले दोनों पैरों में कस कर लपेट ली।

जिस समय अपने को सम्हाल कर गोपालसिंह उठे उन्हें एक विचित्र दृश्य नजर आया। अजगर ने अपनी दुम में शेर को और बिचले धड़ से शेरनी को चारो तरफ से कस लिया था और मुँह से इन दोनों पर बार बार चोट कर रहा था और उधर वे दोनों जानवर अपने खूंखार दांतों और भयंकर पंजों से उस अजगर के बदन के टुकड़े टुकड़े कर डालना चाहते थे। गोपालसिंह उठ कर खड़े हो गये और आश्चर्य में डूबे इस युद्ध को देखते हुए बोल उठे, "ये नकली और बनावटी हैं कि सचमुच के!" वास्तव में इस समय उन जानवरों की तड़प झपट और गरज फुंकार यह निर्णय न करने देती थी कि वे असली हैं या बनावटी।

गोपालसिंह कौतूहल भय और आश्चर्य से इस लड़ाई का दृश्य देख रहे थे कि यकायक फिर चौंके। उनके पैर पर किसी का हाथ पड़ा और जब चमक कर उन्होंने नीचे देखा तो एक बन्दर पर निगाह पड़ी। उनके मुँह से निकल पड़ा, "बस इन्हीं की कसर थी!" और वे उससे भी बचने की तर्कीब सोचने लगे क्योंकि स्वभावतः ही उनके मन में यह खयाल उठा कि यह भी उन पर हमला ही

करने आया होगा, मगर बात ऐसी न थी और वह बन्दर उन्हें छूकर और एक किस्म की किलकारी मार मार उन्हें कुछ बताने की कोशिश करता सा जान पड़ा। उसका एक हाथ सामने की तरफ फैला हुआ था जिसकी सीध पर जब गोपाल-सिंह ने निगाह दौड़ाई तो देखा कि भीतर वाले जानवरों की आहट पा बाहर वाले भी गुफा के अन्दर चले आ रहे हैं। इनसे बचने का क्या उपाय करना चाहिए गोपालसिंह इस बात को सोच ही रहे थे कि उस बन्दर ने उनका हाथ पकड़ लिया और गुफा की दीवार के साथ सटाया। गोपालसिंह को कुछ उभाड़ सा मालूम हुआ जिस पर जरा गौर करते ही उन्हें जान पड़ा कि कुछ अक्षर हैं जो गुफा की दीवार पर खुदे हुए हैं। वे उन अक्षरों पर अपनी उँगलियाँ दौड़ाने लगे। उभड़े हुए होने के कारण उनका समझ में आना सहज था और कुछ ही देर में उन अक्षरों का मतलब निकाल वे उस मजमून के कहे मुताबिक करने को तैयार हो गये। उन्होंने उस बन्दर को उठा कर अपने कंधे पर बैठा लिया और आगे बढ़ कर वहाँ पहुंचे जहाँ शेरों और अजगर का युद्ध हो रहा था। मौका पा तलवार के एक ही हाथ में उन्होंने उस अजगर का सिर काट लिया और उसको उस शेरनी के खुले मुँह में डाल दिया। उछल कर उस शेर को पार किया और तब वहाँ पहुंचे जहाँ बाहर से आये हुए कई शेर एक झुण्ड में खड़े इनकी तरफ अपनी खूंखार आँखों से देख रहे थे।

हाथ ऊँचा कर गोपालसिंह ने उस बन्दर का दाहिना कान पकड़ा और उसको जोर से ऐंठ दिया। साथ ही उस बन्दर के मुँह से एक अजीब तरह की आवाज के साथ आग का फौवारा निकलने लगा। आग देखते देखते बड़ी और कुछ ही सायत में इतनी तेज हो गई कि उन शेरों को लाचार होकर पीछे हटना पड़ा। कुछ ही देर में वे उस गुफा को छोड़ बाहर निकल गये और वहाँ सन्नाटा हो गया। बन्दर के मुँह से निकलने वाली लपट धीरे धीरे कम होती हुई बन्द हो गई। गोपालसिंह ने जब आँख उठा कर देखा तो वह शेर शेरनी और अजगर भी अपनी जगह मुर्दे से पड़े नजर आये जो कुछ ही देर पहिले तक अपनी लपट झपट फुंकार और दहाड़ से उस गुफा को सिर पर उठाये हुए थे।

गोपालसिंह ने उस बन्दर को कन्धे से उतार जमीन पर रख दिया और वह दौड़ता हुआ किसी तरफ को जाकर गायब हो गया। अब उन्होंने कुछ शान्ति के साथ चारों तरफ निगाह दौड़ाई और उस गुफा को सब तरफ से अच्छी तरह देखा और [illegible] उन्होंने इसे जैसा सोचा था उससे कहीं ज्यादा बड़ी गहरी और

काफी दूर तक गई हुई पाया मगर उसका रुख नीचे की तरफ धँसता हुआ था और जब वे आगे बढ़े तो समझ गये कि यह जमीन के अन्दर से होती हुई किसी दूसरी तरफ को आ रही है। कुछ दूर बढ़ जाने पर अंधकार मिला मगर गोपालसिंह ने अपनी तलवार का कब्जा दबा कर रोशनी पैदा की और बेखटके जाने लगे।

लगभग सौ कदम इनको जाना पड़ा और तब वह गुफा समाप्त हो गई। गोपालसिंह ने अपने को एक बाग में पाया जिसमें तरह तरह के छोटे बड़े पेड़ बहुतायत के साथ मगर बिना किसी किते या सिलसिले के लगे हुए थे। गोपाल-सिंह उस बाग में इधर से उधर घूमने लगे।

बाग बहुत बड़ा तो नहीं था फिर भी काफी दूर तक फैला हुआ था और इसके चारो तरफ ऊँची कनाती दीवार थी जिसमें कहीं कहीं दर्वाजे और खिड़कियाँ नजर आ रही थीं और कहीं छोटी बड़ी इमारतें भी थीं। घूमते हुए गोपालसिंह इसके दक्खिन वाले हिस्से में पहुंचे तो यहाँ उनको बहुत ही बड़ी दालानों की एक लम्बी कतार नजर आई जिसकी कुरसी जमीन से बहुत ही कम ऊँची थी और जिसके इस तरफ यानी बगीचे वाली तरफ लोहे का जंगला लगा हुआ तथा पिछली यानी दूसरी तरफ कई बन्द दर्वाजे और खिड़कियाँ थीं। इन दालानों में गोपालसिंह को कुछ विशेषता नजर आई और वे कुछ उत्सुकता और कौतूहल के साथ इनके अन्दर की चीजों को देखने लगे। उन्होंने देखा इन दालानों के कई हिस्से या दर हैं और उन सभी में तरह तरह के पुतले पुतलियाँ और जानवर पाँती बांध कर सजे खड़े हैं। गोपालसिंह को बहुत ताज्जुब हुआ जब उन्होंने अपने ठीक सामने उन्हीं पुतलियों की एक लम्बी कतार देखी जिनको वे कुछ ही देर पहिले बाहर वाले बड़े कमरे में शतरंज खेलते हुए देख आये थे और जिनमें से भड़कदार कपड़े पहिने हुए उस राजकुमारी को उन्होंने देखते ही फौरन पहिचान लिया जो इनसे शतरंज में मात खा कर इन्हें शेरों वाली गुफा का रास्ता दिखा गई थी। जितनी पुतलियाँ वहाँ उस कमरे में बोलती चालती काम करती या खेलती हुई नजर आई थीं उनसे बहुत ज्यादा इस जगह इनको दिखाई दीं, मगर इस समय वे सब की सभी निर्जीव और बेजान पुतलों की तरह खड़ी थीं, किसी में कोई चंचलता चाल या आवाज न थी, और साफ मालूम होता था कि मसाले या कल पुर्जों के जोर से बनी हुई बेजान मूरत हैं। इन पुतलियों के बगल में कुछ जगह छोड़ कर दो तीन कतारें उन सिपाहियों की थीं जिनसे अभी कुछ ही देर पहिले

गोपालसिंह को वास्ता पड़ चुका था, और उनके सिर पर गोपालसिंह ने अपने उस नौजवान सिपाही को भी देखा जिससे कुछ ही देर पहिले वे तलवारबाजी कर चुके थे या जिसने इस पहाड़ी पर से उन्हें शेरों वाली गुफा दिखाई थी। मगर उन पुतलियों की तरह से पुतले भी इस समय बिल्कुल बेजान और स्थिर हो रहे थे। गोपालसिंह उस नौजवान की तरफ देखते हुए बोले, "क्या यही अभी कुछ देर पहिले जीते जागते आदमी की तरह मुझसे लड़ा था और शिकस्त खाकर मेरा ताबेदार बन गया था ! मगर कैसे ताज्जुब की बात है, ये बेजान पुतले उस तरह चलते फिरते और काम करते क्योंकर दिखाई पड़े थे, कौन ताकत इनसे वैसे काम ले रही थी और वह जब उस वक्त इनमें थी तो अब कहाँ गई !!"

गोपालसिंह और आगे बढ़े मगर दो ही चार कदम बढ़ कर रुक गए। उनके सामने उन्हीं भयानक शेरों की कई कतारें थीं जिनके करतब अभी अभी वे देखते हुए आए थे। उस समय का उनका चलना फिरना दहाड़ना और गरजना याद कर इस समय बेजान मूरतों की तरह इन्हें खड़े देख के वे बोल उठे, "और ये शेर भी क्या वे ही हैं जिन्हें मैं अभी अभी देखता आ रहा हूं ? इस समय तो ये बिल्कुल पत्थर के पुतले जान पड़ रहे हैं !!" वे और आगे बढ़े और तब बन्दर अजगर साँप तथा दूसरी तरह के कितने ही जानवर ही नहीं बल्कि बहुत सी चिड़ियाँ भी इन्हें नजर आईं जिनमें उस तरह के कई मोर भी थे जिनमें से एक से 'वायु-मंडप' में इन्हें वास्ता पड़ चुका था। गोपालसिंह इन सब चीजों को देख देख ताज्जुब करते जाते थे और आगे भी बढ़ते जाते थे।

आखिर एक जगह पहुंच वे पुनः रुके। उनके सामने कई पुतले थे जिन्हें देखते ही उनके मुंह से निकल गया—"बेशक ये सूरतें तो वे ही हैं जिन्हें ऊँची बारहदरी में फाँसी पड़े मैंने देखा था ? मगर आश्चर्य की बात है कि वहाँ से इस जगह ये सब कैसे आ पहुंचे ? क्या वह स्थान इस जगह के पास ही कहीं है !" उन्होंने सिर उठा कर अपने चारो तरफ देखा पर वह इमारत कहीं नजर न आई, लाचार वे पुनः आगे बढ़े।

उन दालानों का सिलसिला और आगे तक गया हुआ था मगर अब वह खाली था और इस बात का पता नहीं लगता था कि यहाँ पर भी कुछ पुतले पुतलियाँ रही होंगी या नहीं, फिर भी जमीन पर एक अजीब किस्म की चकाबू के तरह की नालियाँ जिन पर पहिले के दालानों में उनका ध्यान जा चुका था इस जगह भी बनी हुई थीं जिससे शक हो सकता था कि यहाँ भी उसी तरह

का कुछ सामान रहा होगा जैसा वे पीछे देखते आ रहे हैं, पर यदि ऐसा ही है तो इस समय वे चीजें कहाँ चली गई हैं जो यहाँ थीं। इसका पता लगाना असम्भव था अस्तु गोपालसिंह ने अपने मन में समझ लिया कि वे किसी दूसरी जगह अपना तिलिस्मी खेल दिखा रही होंगी या सम्भव है कि वे ही चीजें यहीं रहती हों जिनसे पीछे कुछ हद तक चिपटते हुए वे आ रहे थे। मगर इसी समय गोपालसिंह का ध्यान एक तरफ चुपचाप बैठे हुए एक बन्दर की तरफ गया जिसके हाथ में किसी धातु की एक पटरी थी। इसके बैठने के ढंग से उन्हें कुछ ताज्जुब मालूम हुआ और उन्होंने हाथ बढ़ा कर वह पटरी उस बन्दर से लेनी चाही। पटरी सहज ही में अलग हो गई और जब गोपालसिंह ने उसे गौर से देखा तो उस पर यह मजमून खुदा हुआ पाया :—

"इन पुतले पुतलियों जानवरों और चिड़ियों से तुम तरह तरह के काम ले सकते हो और जरूरत पड़ने पर ये आपस में बोलचाल और बातें भी कर सकते हैं। तिलिस्म के भीतर और कुछ हद तक इसके बाहर भी इनसे काम लेकर अपने दोस्तों को ताज्जुब में डाल देने की पूरी तर्कीब तुमको एक ताम्रपत्र पर लिखी हुई मिलेगी जो तीसरा दर्जा तोड़ने बाद तुम्हारे कब्जे में आयेगा।"

गोपालसिंह ने ताज्जुब और प्रसन्नता के साथ कहा, "अगर ये बेजान पुतले वैसे ही काम कर सकते हैं जैसा मैं देखता आ रहा हूँ तो बेशक ये बड़े नायाब खिलौने हैं !"

दालान खतम हुए और बाग की कनाती दीवार नजर पड़ी जिसके साथ साथ धीरे धीरे चलते हुए गोपालसिंह जाने लगे मगर उनकी चंचल निगाहें चारो तरफ घूमती हुई जरूर किसी चीज की खोज में थीं और आखिरकार उन्होंने उसे खोज ही निकाला। एक बहुत ही बड़े और पुराने बरगद के पेड़ की अनगिनती जड़ों की आड़ में छिपा हुआ एक गोल चबूतरा उन्हें नजर आया जिसके ऊपर एक छोटी पिण्डिका बनी हुई थी। गोपालसिंह इसे देखते ही इसके तरफ बढ़े और बहुत देर तक गौर से देखते रहने के बाद बोले, "बेशक यही जगह है।" वे वहीं जमीन पर बैठ गये और अपनी तिलिस्मी किताब खोल उसे बहुत गौर से पढ़ने लगे। थोड़ी देर तक एक किताब पढ़ी, तब उसे बन्द किया और दूसरी पढ़ने लगे। जब सब तरह से अपनी दिलजमई कर ली तो गोपालसिंह ने दोनों किताबें ठिकाने रक्खीं और आगे की कार्रवाई करने के लिए तैयार होकर उठ खड़े हुए।

अपना सब सामान दुरुस्त कर गोपालसिंह उस चबूतरे पर चढ़ गए और

पिण्डिका को खूब गौर से देखने लगे। बहुत दिन की हो जाने के कारण यह पता न लगता था कि वह चूने मिट्टी की है या पत्थर अथवा किसी धातु की। उसमें जगह जगह दरारें भी पड़ी हुई थीं जिनमें से एक जगह उन्हें तिकोनी दरार औरों से कुछ चौड़ी मालूम हुई और इसके ऊपर वही ताली रख कर जिससे शतरंज वाले कमरे का फाटक बन्द किया था उन्होंने जोर से दबाया। एक छोटा सा हिस्सा भीतर की तरफ घुस गया और ताली लगाने का छेद सा बन गया जिसमें ताली डाल कई दफे घुमाई। वह पिण्डिका कुछ ऊंची होती सी मालूम हुई और साथ ही उसकी जड़ के पास एक सूराख भी नजर आने लगा। ताली छेद से निकाल गोपालसिंह ने अपनी तिलिस्मी तलवार इस सूराख के अन्दर डाल दी। वह कब्जे तक अन्दर घुस गई और उसके जाते ही वह पिण्डिका ही नहीं बल्कि वह पूरा चबूतरा जिस पर वह पिण्डिका बनी हुई थी अजीब तरह से कांपने और हिलने लगा।

चबूतरे का कांपना और हिलना पल पल में बढ़ता ही जाता था और कुछ ही देर में इतना बढ़ गया कि गोपालसिंह को यह सन्देह हुआ कि वे उस पर से गिर जायेंगे। उन्होंने अपना कमरबन्द खोल कर उससे अपने को उस पिण्डिका के साथ कस कर मजबूत बांध लिया और दोनों हाथों से भी उसको जकड़ के मजबूत बैठ गए। इसी समय वह चबूतरा और भी जोर से कांपा और जमीन के अन्दर धँस गया। झटके के कारण गोपालसिंह की आँखें बन्द हो गईं और वे कुछ बेसुध से भी हो गए।

जिस समय गोपालसिंह होश में आये उन्होंने अपने को किसी बड़ी ही अंधेरी और सूनसान जगह में जमीन पर पड़े हुए पाया। उस पिण्डिका या चबूतरे का कहीं पता न था जिस पर वे चढ़े थे पर वह कमरबन्द जिससे अपने को पिण्डिका के साथ बांधा था अभी तक उनके चारो तरफ लिपटा हुआ था और उनकी तिलिस्मी तलवार भी पास ही में पड़ी हुई थी। वे कैसी जगह में हैं यह जाँचने के लिए जब गोपालसिंह ने अपना हाथ जमीन पर दौड़ाया तो तलवार का कब्जा उनके हाथ में लगा और उन्होंने उठा कर उसको दबाया। बहुत तेज रोशनी सब तरफ फैल गई और तब उन्होंने देखा कि वे कैसी अजीब जगह में हैं।

एक बहुत ही बड़ा कमरा जिसकी छत इतनी ज्यादा ऊँची थी कि साफ साफ नजर न आती थी तरह तरह के सामानों से भरा हुआ गोपालसिंह के सामने था। कमरे की दीवार के साथ साथ चारो तरफ तथा उसकी छत के साथ भी जंजीरों के सहारे लटकते हुए तरह तरह के पुतले नजर आ रहे थे जो रंग ढंग से वैसे ही

जान पड़े जिनमें के बहुत से गोपालसिंह अभी उन दालानों में देखते हुए आ रहे थे। उनमें मर्द औरत जानवर चिड़िया सांप अजगर आदि सभी कुछ थे और इनकी गिनती की तरफ ध्यान देने से गोपालसिंह को गुमान हुआ कि ये सब भी अगर उस जगह पहुँच जांय तो जरूर उन दालानों का वह हिस्सा भी भर जायगा जो उन्होंने खाली देखा था। उन्होंने मन में सोचा—"क्या ताज्जुब कि ये सब पुतले भी उसी दालान में रहते हों, किसी खास वजह से यहां आये हों और काम हो जाने पर पुनः वहीं जा बैठें!"

कमरे के बीचोबीच गोपालसिंह को संगमर्मर के एक ही बहुत बड़े टुकड़े को तराश कर बनाई हुई बड़ी सी गोल चौकी नजर आई जिसके ऊपर कोई गोल सुनहरी चीज पड़ी हुई चमक रही थी। चौकी के पीछे काले पत्थर की एक बहुत ही विशालकाय डरावनी मूरत थी जो इतनी लम्बी चौड़ी थी कि एक आदमी कोशिश करने पर उसके खुले हुए मुँह में घुस जा सकता था। कद के हिसाब से मूरत का पेट और भी ज्यादा बड़ा और फूला हुआ था और हाथ पाँव भी उसी अन्दाज के थे। मूरत की आकृति इतनी डरावनी थी कि देखने से डर जान पड़ता था।

गोपालसिंह कुछ देर तक एकटक उस मूरत और उसके सामने वाली चौकी पर की सुनहरी चीज को देखते रहे, इसके बाद उठे और पास जाकर उसे और भी गौर से देखने के बाद बोले, "हो न हो चक्रव्यूह इसी जगह का नाम है, और यहाँ के तिलिस्म को तोड़ कर मैं तीसरे दर्जे का काम समाप्त कर डालूँगा। यद्यपि चौथा दर्जा तोड़ने के लिए मुझको पुनः यहीं आना पड़ेगा मगर इस समय ज्यादा देर तक यहाँ रुकना खतरनाक होगा। मुझे यहाँ का काम निपटा ही डालना चाहिए।"

गोपालसिंह पीछे की तरफ हटे और कमरे की एक दीवार के पास पहुँच कर उन्होंने कुछ किया जिसके साथ ही एक अजीब तरह की भारी आवाज सब तरफ गूँज उठी जो किसी तरह के कल पुर्जे के चलने की जान पड़ती थी मगर किधर से आ रही है इसका पता न लगता था। गोपालसिंह ने उस तरफ ज्यादा ध्यान न दिया और कुछ हट कर एक दूसरे पुर्जे को छेड़ दिया जिसके साथ ही उस जगह तेज रोशनी फैल गई जो छत के साथ लगे शीशे के कई गोलों में से निकल रही थी। अपने हाथ की तिलिस्मी तलवार अब गोपालसिंह ने म्यान में रख ली और दोनों तिलिस्मी किताबें निकाल उन्हीं गोलों की रोशनी में बड़े ध्यान से

उलट पलट कर देखने लगे ।

बार बार पढ़ते रहने के कारण इन दोनों ही किताबों का मजमून गोपालसिंह को बखूबी याद हो गया था फिर भी उन्होंने जगह जगह से उन दोनों पुस्तकों को और भी अच्छी तरह देखा और तब उन्हें बन्द करते हुए बोले, "कोई हर्ज नहीं, अब यह किताबें न भी रहें तो मेरा काम रुक नहीं सकता !" वे अपनी जगह से हटे और अब पहिले पहिल उनका ध्यान इस बात पर गया कि संगमर्मर की चौकी पर जो सुनहरी चीज पड़ी हुई थी और जो वास्तव में एक बहुत बड़ा चक्र था वह इस समय बहुत तेजी से घूम रहा है ! केवल यही नहीं, उन्होंने देखा कि उस काले पत्थर की मूरत के बदन में भी एक अजीब तरह की हरकत हो रही है और उसके अंग प्रत्यंग कुछ इस ढंग से हिल डुल रहे हैं मानों वह जीती जागती हो ! गोपालसिंह के देखते देखते उस मूरत का हाथ उसके पेट पर गया और इस तरह घूमा मानों वह भयानक आकृति अपने पेट पर हाथ फेर रही है। इसके बाद उसने अपना मुँह खोल कर एक जम्हाई ली और तब भारी गले से कहा, "भूख लगी है !"

मूरत का यह ढंग बड़ा ही भयावना जान पड़ता था मगर गोपालसिंह इस पर हंस पड़े और धीरे से बोले, "जरूर ऐसा होगा चक्रधर, क्योंकि बहुत दिनों से तुम्हारे पेट में कुछ नहीं गया, मगर मैं तुम्हारी भूख मिटाने ही के लिए यहाँ आया हूँ। लाओ अपना हाथ बढ़ाओ, आज मैं वह चीज तुम्हें दूँगा जो हमेशा के लिए तुम्हारे पेट की ज्वाला शान्त कर देगी ।"

ताज्जुब की बात थी कि इतना सुनने के साथ ही उस मूरत के हाथ गोपालसिंह की तरफ बढ़ने लगे । उनकी लम्बाई भी बढ़ने लगी और कुछ देर में दोनों हाथ गोपालसिंह के पास आ पहुँचे । ऐसा जान पड़ता था मानों वे इनको पकड़ने के लिए बढ़ रहे हैं, मगर गोपालसिंह कुछ भी न डरे बल्कि अपना हाथ बढ़ा कर उन्होंने उस मूरत के एक हाथ पर एक तिलिस्मी किताब रख दी, इसके बाद दूसरे हाथ पर दूसरी किताब रख दी और तब दोनों हाथों की उँगलियां मोड़ कर उन्हीं किताबों पर इस तौर से दबा दीं मानों वह किताबें उनमें पकड़ रहे हों । उँगलियों का दबाना था कि उस मूरत के गले से एक अजीब डरावनी तरह की हँसी निकली और वह बोली, "आह, आज कितने दिनों बाद मेरी असली खूराक मुझको मिली है । उस बहादुर का भला हो जिसने मेरे साथ यह उपकार किया । मगर बहादुर, इसके बदले में मैं भी तुमको एक ऐसी चीज दूंगा

कि खुश हो जाओगे !" मूरत के दोनों हाथ पीछे को वापस लौटे साथ ही छोटे भी होने लगे । उन्होंने पहिले एक तब दूसरी किताब उसके मुँह में डाल दी और तब अपने ठिकाने हो गये । मूरत का खुला मुँह बन्द हो गया मगर दाढ़ें इस तरह हिलने लगीं मानों वे उन किताबों को चबा रही हों । थोड़ी देर बाद उसका मुँह पुनः खुला और ऐसी आवाज आई मानों वह डिकार ले रहा हो, इसके बाद डरावनी आवाज में वह मूरत बोली, "आह, इतने जमाने के बाद आज मेरी भूख शान्त हुई !" कुछ देर तक सन्नाटा रहा इसके बाद फिर वह मूरत बोली, "जरूर मुझे भी इस बहादुर के लिए कुछ करना चाहिए, अच्छा पक्षिराज, जरा बाहर तो निकलो !"

एक अजीब तरह की आवाज हुई और उस मूरत का बहुत बड़ा पेट जोर से हिला । इसके बाद ही उसके दो टुकड़े हो गये जो घूम कर पल्लों की तरह खुल गये और अन्दर से एक बड़ी सी चिड़िया निकल कर गोपालसिंह के सामने आ खड़ी हुई । गोपालसिंह ने देखा कि यह डील डौल में इतनी बड़ी थी कि एक नहीं बल्कि कई आदमी इसकी पीठ पर आसानी से बैठ सकते थे । इसकी चोंच में एक ताँबे की तख्ती थी । हाथ बढ़ा कर गोपालसिंह ने यह तख्ती खींच ली और रोशनी में ले जाकर पढ़ने लगे । यह लिखा हुआ था :—

"आगे का काम सहज ही समाप्त करने और बाद में भी काम आने के लिए महाराज सूर्यकान्त के दरबारी कारीगर विश्वकर्मा ने तुम्हारे लिए यह पक्षिराज गरुड़ बना कर यहाँ रक्खा है । इसकी गति अबाध है । जल स्थल आकाश तीनों ही में यह भ्रमण कर सकता है । अगर कोई तिलिस्मी हथियार इसके परों से छुला दिया जाय तो यह आकाश में उड़ सकता है, पैरों से छुला दिया जाय तो पृथ्वी पर दौड़ सकता है, और गर्दन से छुला दिया जाय तो पानी में तैर सकता है । तुम इससे जो कहोगे यह वही करेगा । विशेष अवस्थाओं में इससे काम लेने की तर्कीब इस तख्ती की पीठ पर लिखी है ।"

ताज्जुब करते हुए गोपालसिंह ने तख्ती उलट कर उसकी पीठ देखी और महीन अक्षरों में बहुत सी बातें लिखी हुई पाईं जिन्हें वे ताज्जुब के साथ पढ़ गये और तब पुनः उस चिड़िया की तरफ घूमते हुए आश्चर्य के साथ बोले, "अगर जो कुछ इस तख्ती में लिखा है वह सही है तो तिलिस्म बनाने वालों ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया है, मगर मुझे इस जगह इन बातों की जाँच करने में देर

न लगानी चाहिए। तिलिस्मी किताब में लिखा था कि इस मूरत के पेट के अन्दर से होकर आगे जाने का रास्ता मिलेगा, अस्तु मुझे उधर ही चलना चाहिए। अच्छा पक्षिराज जरा इधर तो आओ !"

आश्चर्य की बात थी कि इनकी यह बात सुनते ही वह चिड़िया अपने दोनों भारी पैरों द्वारा एक अजीब अन्दाज से चलती हुई गोपालसिंह के सामने आकर खड़ी हो गई। गोपालसिंह कुछ देर तक घूम फिर कर उसको सब तरफ से देखते रहे, तब उछल कर उसकी पीठ पर चढ़ गये और बोले, "मुझे उस मूरत के अन्दर ले चलो।" चिड़िया ने एक अजीब ढंग से अपनी गर्दन हिलाई और तब घूम कर पीछे की तरफ चली। एक हलकी उछाल मार उसने तेजी से घूमते हुए उस चक्र को पार किया, मूरत के खुले हुए पेट के पास पहुँची, और तब उसके अन्दर घुस गई। पेट के दोनों हिस्से जो दो तरफ को खुले हुए थे उस चिड़िया के अन्दर जाते ही बन्द हो गए और गोपालसिंह ने अपने को घोर अन्धकार में पाया।

दूसरा बयान

घनघोर जंगल पार करके चलते हुए दो आदमी अभी अभी उस मैदान में आकर पहुँचे हैं जिसके एक सिरे पर वह बावली है जो तिलिस्म में जाने का रास्ता है और जहाँ हमारे पाठक आज के पहिले भी कई बार आ चुके हैं।*

संध्या होने को आ गई है और तेजी के साथ नीचे को उतरते हुए सूर्य की किरणें उस आम की बारी के ऊँचे पेड़ों पर अपना कब्जा जमाए हुए हैं जिसने इस बावली को घेरा हुआ है। दिन भर की मेहनत के बाद शाम आती देख अपने अपने घोंसलों को लौटने वाली चिड़ियों की बोली से दिशाएँ गूँज रही हैं और एक अजब मनोरम समा बँध रहा है।

इन दोनों आदमियों में से जिनका समूचा बदन यहाँ तक कि चेहरा भी पर्दे की आड़ में छिपा हुआ है, एक बहुत ही सुस्त और कमजोर जान पड़ता था और अपने साथी का सहारा लिए चल रहा था। यहाँ पहुँच कर वह एक दम ही लाचार हो गया और कमजोर आवाज में बोला, "बस अब तो मैं किसी तरह भी आगे चल नहीं सकता।" जिसके जवाब में उस दूसरे आदमी ने कहा, "अब हमें आगे चलने की जरूरत भी नहीं है। राजा साहब ने इसी जगह मिलने का वादा

* देखिये रोहतासमठ तीसरा भाग, चौथा बयान।

किया है और अगर मेरी निगाहें धोखा नहीं खा रही हैं तो वे हमारे राजा साहब ही हैं जो वह देखो चले आ रहे हैं।"

उस दूसरे आदमी ने निगाह उठा कर देखा और दूर मैदान में गर्द उड़ती हुई पाकर कहा, "आपने तो कहा था कि राजा साहब इसी जगह मौजूद होंगे !" दूसरा बोला, "उम्मीद भी मुझे यही थी पर शायद किसी काम में फँस गये होंगे। अच्छा अब इस चादर पर बैठ जाओ और कुछ देर आराम कर लो। राजा साहब बात की बात में आ पहुँचते हैं।"

अपनी कमर से चादर खोल उस आदमी ने जमीन पर बिछा दी और अपने साथी को उस पर बैठा देने के बाद बावली में उतर कर हाथ मुँह धोने चला गया। उससे निश्चिन्त हो थोड़ा जल लिए हुए वह अपने साथी के पास पहुँचा और उसका भी हाथ पैर धुलवाया। तब तक वह गर्द जो दूर से उड़ती नजर आ रही थी साफ हो गई और मालूम होने लगा कि कई आदमी घोड़ों पर सवार इसी तरफ आ रहे हैं। कुछ देर और बीतते बीतते सब शक दूर हो गया और साफ नजर आने लगा कि अपने कई साथियों के साथ राजा शिवदत्त इधर ही चले आ रहे हैं।

थोड़ी देर में शिवदत्त उस जगह आ पहुँचा। उसके इशारे पर उसके साथी पीछे ही रह गये और अकेले वह आगे बढ़ कर तेजी से चलता हुआ उस जगह पहुँचा जहाँ ये दोनों थे। इन्होंने उसको आते देख अपनी जगह से आगे बढ़ कर उसका इस्तकबाल किया और उधर वह इनको देखते ही घोड़े से उतर तेजी से आगे बढ़ता हुआ उस कमजोर व्यक्ति का हाथ पकड़ कर बोला, "ओफ मेरे दोस्त, आखिरकार तुम आ ही पहुँचे ! मैं नहीं कह सकता कि इस वक्त तुमको देख कर मुझे कितनी खुशी हो रही है, क्योंकि लोगों ने मुझे यह विश्वास दिलाया था कि तुम अब इस दुनिया में नहीं रहे।" जवाब में उस आदमी ने कहा, "बेशक दुष्टों ने अपने भरसक ऐसा करने में कोई कसर न छोड़ी थी मगर अभी कुछ दिन जिन्दगी बाकी थी और आपका दर्शन बदा था जो आपके ऐयार पहुँच गये और मुझे जीता जागता छुड़ा लाए।"

शिवदत्त यह सुन उसके साथी की तरफ देखता हुआ बोला, "बेशक यार-अली ने बहुत बड़ा काम किया। मैं इनसे इतना खुश हूँ कि कुछ कह नहीं सकता और इस बात का इनाम भी इनको इसी जगह दे देना मुनासिब समझता हूँ।" शिवदत्त ने अपनी कमर में हाथ डाला और न जाने क्या चीज निकाल कर उसके

हाथ पर रख दी जिसे देखते ही यारअली की आँखें चमक उठीं और उसने बड़ी इज्जत के साथ उसे अपनी आँखों से लगा लिया। इसके बाद शिवदत्त का मतलब समझ कर वह कुछ बहाना कर वहाँ से टल गया और ये दोनों अकेले रह गये। शिवदत्त भी आगे बढ़ कर उसी चादर पर जा बैठा और उस आदमी को अपने पास बैठा कर उससे बातें करने लगा। पाठकों को ज्यादा देर सन्देह में न डाल हम बता देते हैं कि यह नौजवान वही श्रीविलास है जिसके साथ तिलिस्म के अन्दर जा कर शिवदत्त एक बार बड़ी आफत में पड़ गया था*।

शिवदत्त०। यारअली ने जब पहिले पहिल मुझे यह खबर सुनाई कि तुम मरे नहीं जीते और किसी की कैद में हो तो मुझे यकायक विश्वास न हुआ पर मैंने मुँहमाँगा इनाम देने की लालच देकर उसे इस काम में लगा दिया और उसने भी अपना वादा पूरा किया। अब तुम जल्दी बताओ कि वह कौन दुश्मन था जिसने तुमको इस कदर तकलीफ दी और मुझे तो एक दम पंगु ही बना छोड़ा। यारअली ने इस बारे में जो कुछ कहा उससे मेरा शक तो जमानिया के दारोगा साहब पर ही जाता है।

श्रीविलास०। बेशक पहिले मुझे भी यही खयाल था और मैं उन्हीं को अपना दुश्मन समझ रहा था कारण कि वे कई बार मुझे तरह तरह से धमका चुके थे, मगर अब जो खयाल दौड़ाता और सब तरफ गौर करता हूँ तो कोई दूसरी ही बात मालूम होती है, क्योंकि जिस जगह से आपके ऐयार यारअली ने मुझे निकाला वह किसी दूसरे ही की अमलदारी में थी जहाँ उस कम्बख्त दारोगा की पहुँच होगी ऐसा विश्वास नहीं होता।

शिव०। (ताज्जुब से) ऐसा! तो यारअली ने तुमको कहाँ पाया और कहाँ से निकाला?

श्री०। रोहतासगढ़ किले के अन्दर से।

शिव०। रोहतासगढ़! तो क्या तुम इतने दिन वहीं थे?

श्री०। जी हाँ, यद्यपि शुरू में तो मेरी कई जगह बदली की गई मगर ये आखिरी कई महीने मैं जिस जगह था वह भी रोहतासगढ़ किले की एक गुप्त कोठरी। भाग्यवश ही यारअली वहाँ पहुँच गये और मुझे छुड़ा सके नहीं तो वह भी एक ऐसी जगह थी कि जहाँ मैं जिन्दगी भर बन्द रहता तो भी किसी को

* देखिये रोहतासमठ तीसरा भाग, सातवाँ बयान।

खाक पता न लगता और न मैं ही कुछ समझ पाता कि मैं कहाँ पर किसकी कैद में हूँ, और इसी से मैं समझता हूँ कि मेरे मामले में जरूर दिग्विजयसिंह का भी कुछ हाथ है!

शिव०। (सिर हिला कर) नहीं, यद्यपि इस समय दिग्विजयसिंह बहुत बड़े तरद्दुद में पड़ गये हैं और ठीक ठीक कुछ पता लगना मुश्किल है मगर फिर भी मैं कह सकता हूँ कि तुम्हारे ऊपर जो कुछ बीती उसका कारण और जो कोई भी हो पर कम से कम वे तो हर्गिज नहीं थे।

श्री०। मगर मैं उन्हीं के किले में बन्द था।

शिव०। भले ही रहे हो। तुम्हें शायद नहीं मालूम कि दारोगा की चालाकियों का जाल रोहतासगढ़ तक फैला हुआ है और वहाँ के कई मुसाहिब और सर्दार उसके हुक्मी बन्दे हो रहे हैं, औरों की तो जाने दो खास दिग्विजयसिंह भी उसे इतना मानते हैं कि उसी के हुक्म से उन्होंने अपनी ये आखिरी कार्रवाइयाँ की हैं जिनके बारे में मेरा तो विश्वास है कि वे उनको मटियामेट करके छोड़ेंगी!

श्री०। खैर जो कुछ भी हो मैं तो ऐसी अंधेरी कोठरी में बन्द था कि जहाँ हवा और रोशनी का भी गुजर नहीं होता था, और इसी से दुनिया में इस बीच क्या कुछ हो गया और इस वक्त किधर की क्या कैफियत है मैं कुछ नहीं जानता सिवाय उन कुछ बातों के जो मुझे छुड़ा कर लाते समय रास्ते में यारअली से मुझसे हुई हैं, मगर अपना विचार आपसे मैंने प्रकट किया कि शायद मेरी गिरफ्तारी में दिग्विजयसिंह का भी कोई हाथ हो। आप जो उसे इस मामले से अलग करते हैं इसका क्या कोई खास सबब है?

शिव०। जरूर है! बात यह है कि यों तो यद्यपि मेरी उनकी भेंट मुलाकात बहुत पुरानी है पर इधर जब से मैं तिलिस्मी मामलों के चक्कर में पड़ा हूँ तब से मजबूरन मुझे उनसे रफ्त जप्त बढ़ानी पड़ गई है। बात के सिलसिले में तुमसे कहता हूँ कि इसी से एक दिन मौका मिलने पर मैंने उनसे उस वक्त शिवगढ़ी में जो कुछ हुआ था उसका जिक्र किया और मन्दिर वाली उस भयानक करामाती मूरत का भी हाल बताया। सुन कर वे बहुत हँसे और बोले कि वह तो महज एक तिलिस्मी तमाशा है और उस तरह के कितने ही पुतले पुतलियाँ उस तिलिस्म में हैं जो अजब अजब तरह के काम करते हैं। खैर तो बातों ही बातों में मैंने उनसे जिक्र किया कि मेरी लड़की मेरी नाक काटने पर आमादा हो गई और मेरे सबसे बड़े दुश्मन

बीरेन्द्रसिंह के लड़के पर आशिक होकर उसके लिए जान दे रही है। इस पर वे बोले कि बीरेन्द्रसिंह का बढ़ता हुआ प्रताप देख कर मुझको भी डाह हो रही है और साथ ही तुम्हारी लड़की की खूबसूरती की भी बेहद तारीफ सुनी है सो अगर तुम कहो तो मैं तुम्हारी लड़की अपने राजकुमार कल्याणसिंह से ब्याह दूँ! यह बात सुनते ही मैं खुश हो गया और बोला कि अगर ऐसा कर सकें तो मुझ कंगाल के पास और कुछ तो नहीं है पर जो एक तिलिस्मी सौगात मेरे पास आई है वह मैं आपके भेंट कर दूँगा।

श्रीविलास० । तिलिस्मी सौगात! वह क्या?

शिव०। हाँ ठीक है, तुम तो इधर महीनों से अपनी ही मुसीबतों में पड़े रहे, तुमको भला क्या खबर होगी, पर बात यह है कि इधर मेरे हाथ एक बड़ी ही नायाब चीज लग गई है।

श्री०। लेकिन आखिर क्या?

शिव०। वह एक किताब है जो बीरेन्द्रसिंह को विक्रमी तिलिस्म के अन्दर से मिली थी। लोग कहते हैं कि वह किसी आदमी के खून से लिखी गई है और इसी लिए जानकार लोग उसे 'रिक्तगन्थ' पुकारते हैं।

श्री०। रिक्तगन्थ! वह कैसे आपको मिल गया?

शिव०। (हँस कर) बस किस्मत थी कि हाथ लग गया! मेरे ऐयारों की कारीगरी का यह भी एक नमूना है!

श्री०। मैंने उस किताब की बहुत तारीफ सुनी है और कितने ही लोग तरह तरह पर उसका जिक्र मुझसे कर चुके मगर कभी देखने की नौबत न आई। सुनते हैं कि उसकी मदद से जो चाहे तिलिस्म में घुस और उसकी सैर कर सकता है और अगर किस्मत लड़ जाय तो तिलिस्म तोड़ वहाँ का खजाना भी कब्जे में कर सकता है।

शिव०। बेशक ऐसी ही बात है।

श्री०। क्या वह चीज आपके पास है! क्या मैं उसे देख सकता हूँ?

शिव०। वह है भी और तुम उसे देख भी सकते हो मगर उसका मतलब समझना बहुत कठिन है। मैं कई बार उसे पढ़ गया पर मेरी समझ में उसका पूरा मतलब न आया क्योंकि उसमें कुछ शब्द ऐसे आते हैं जिनका कोई अर्थ ही नहीं निकलता। मैं तुम्हें वह किताब दिखाऊँगा पर पहिले अपनी बात खतम कर लूँ।

श्री०। शायद मैं आपका वह तरद्दुद दूर कर सकूँ क्योंकि मुझे इसका कुछ

रहस्य मालूम है। मगर हाँ तो आप क्या कह रहे थे कि आपने दिग्विजयसिंह से कहा कि आप उन्हें वह खूनी किताब दे देंगे अगर वे आपकी लड़की की शादी अपने राजकुमार से कर लें!

शिव०। हाँ और इस बात को सुनते ही वह इतने खुश हुए कि हद नहीं, क्योंकि असल में उनको भी उस किताब का पूरा हाल केवल मालूम ही नहीं है बल्कि वे बहुत दिनों से उसको पाने की फिक्र में भी लगे हुए हैं।

श्री०। ठीक है, अच्छा तब? उन्होंने आपकी बात मान ली?

शिव०। हाँ, कम्बख्त किशोरी मेरे कब्जे से बाहर होकर एक दूसरी ही जगह जा पहुँची थी। उन्होंने अपने ऐयारों से उसको पकड़वा मँगवाया और अपने किले में ले जाकर अपने लड़के के साथ उसके ब्याह की तैयारियाँ शुरू कर दीं पर ईश्वर कम्बख्त बीरेन्द्रसिंह का बुरा करे, उसके ऐयार वहाँ भी पहुँच गये और ऐसी चाल कर बैठे कि सब सोचा विचारा धरा रह गया, यानी वे खास राजकुमार कल्याणसिंह ही को किले के अन्दर से पकड़ कर उठा ले गये और अब वह बीरेन्द्रसिंह का कैदी है। जब तक वह छूट कर न आवे शादी नहीं हो सकती और अब इसके लक्षण बहुत ही कम हैं क्योंकि बीरेन्द्रसिंह की फौज ने किला घेर लिया है और वहाँ बहुत गहरी लड़ाई की तैयारी हो रही है।

श्री०। हाँ ठीक है, जिस समय आपके यारअली मुझे छुड़ा कर ला रहे थे मैंने उस लश्कर को देखा जो रोहतासगढ़ के किले का मुहाना रोके पड़ा है। मगर अब तो मामला बहुत मुश्किल नजर आता है, हाँ तो क्या उसी सिलसिले में मेरा भी कोई जिक्र राजा दिग्विजयसिंह से आया?

शिव०। हाँ वह बात तो बताना ही मैं भूल गया। उसी रिक्तगन्थ का जिस समय जिक्र हो रहा था तो राजा दिग्विजयसिंह ने तुम्हारा नाम लिया और कहा कि श्रीविलास अगर इस समय होता तो बड़ा काम चलता।

श्री०। (ताज्जुब से) अच्छा, मुझसे क्या काम बनता?

शिव०। उन्होंने कहा कि उसके पास भी एक तिलिस्मी किताब थी और रिक्तगन्थ तथा वह दूसरी किताब ये दोनों अगर पास में हो जायँ तो शिवगढ़ी का तिलिस्म तोड़ वहाँ की समूची दौलत कब्जे में की जा सकती है।

श्री०। मगर आपने कहा नहीं कि वह किताब मेरे कब्जे से निकल गई और

---

† यह सब हाल बहुत खुलासा तौर पर चन्द्रकान्ता सन्तति में लिखा जा चुका है।

कई जगह से घूमती फिरती आजकल कम्बख्त दारोगा के पास है ?

शिव० । मैंने जरूर यह बात कही मगर वे बोले कि नहीं दारोगा साहब के पास से भी वह निकल गई और सुनने में आया कि फिर श्रीविलास ही के कब्जे में पहुँच गई । उस समय मैंने कहा कि श्रीविलास तो मारा गया और इस बात को सुन उनको बहुत ताज्जुब हुआ । इसी से मैं कहता हूँ कि तुम्हारे मामले में और चाहे किसी का भी हाथ हो पर दिग्विजयसिंह का हर्गिज नहीं है ।

श्री० । (कुछ सोचता हुआ) जाने क्या बात है ! खैर अब जब मैं जीता जागता उस काल कोठरी से निकल आया हूँ तो सब कुछ पता लगा लूँगा और मेरी वह किताब जिसके कब्जे में होगी उसको भी ढूँढ़ निकालूँगा........

शिव० । (अजीब ढंग से मुस्कुरा कर) अगर मुझे कुछ इनाम दो तो मैं उस किताब का भी पता बता सकता हूँ ।

श्री० । (ताज्जुब से) मेरी वाली किताब का ? उसका हाल आपको क्योंकर मालूम है ?

शिव० । इतना ज्यादा मालूम है कि कहो तो मैं उसको तुम्हारे हाथ पर रख दूँ ?

श्री० । मालूम होता है आप मुझसे मजाक कर रहे हैं !

शिव० । हर्गिज नहीं ! अच्छा सुनो मैं उसका हाल भी बताता हूँ । तुमने मुझसे कहा था कि तुमने उसे नन्हों को अपने ऊपर फरेफ्ता करा के उससे लिया था, तुम्हारे कब्जे से वह भैयाराजा के पास चली गई थी जिन्होंने गोपालसिंह को दे दिया, और उनके मरने पर दारोगा साहब ने उस पर कब्जा कर लिया ।

श्री० । बेशक ऐसा ही है ।

शिव० । दारोगा साहब उसको हरदम अपने पास ही रखते थे और एक पल के लिए भी कहीं जुदा न करते थे । वे उसे अजायबघर की ताली कहा करते थे ।

श्री० । जरूर वह कम्बख्त ऐसा ही कहता होगा ।

शिव० । भाग्यवश मेरे ऐयारों को इस बात का पता लग गया और एक दिन चालाकी कर उन्होंने वह किताब उसके पास से चुरा ली ।

श्री० । है, ऐसा ! तब वह कहाँ है ?

शिव० । (हँसता हुआ) मेरे पास !

श्री० । आपके पास ! तो क्या आपके पास इस समय दो दो तिलिस्मी किताबें हैं ! तब तो मैं कहूँगा राजा साहब कि आप बड़े ही खुश-किस्मत हैं !!

शिव० । सब से बढ़ कर इस बात में कि अब मेरे ऐयारों की कारीगरी से तुम भी छूट कर मुझसे मिल गये हो । मुझे विश्वास होता है कि अब अगर तुम और मैं कोशिश करके एक बार पुनः तिलिस्म में घुसें और उन दोनों किताबों की मदद लेकर काम करें तो और कुछ अगर नहीं तो कम से कम भरपूर खजाना तो कब्जे में कर ही सकते हैं ।

श्री० । इसमें तो रत्ती भर का भी सन्देह आप न समझें बल्कि अगर भगवान झूठ न बुलावें तो इससे ज्यादा ही कुछ हो सकता है, मगर (सिर हिलाकर) मुझे विश्वास नहीं होता कि एक साथ दो दो तिलिस्मी किताबें आपके पास होंगी, ऐसा किसी बहुत बड़े भाग्यशाली के सम्बन्ध में ही हो सकता है ।

शिव० । ऐसा ! तब तो मुझे तुम्हारा शक दूर करना ही पड़ेगा, अच्छा देखो, पहिले तो यह, यही न तुम्हारी तिलिस्मी किताब है ?

जिस तरह कोई जादूगर अपने जेब में हाथ डाल कर खरगोश या कबूतर निकाल कर तमाशाइयों को ताज्जुब में डुबो देता है कुछ उसी तरह की मुद्रा से शिवदत्त ने अपनी जेब में हाथ डाला और एक छोटी सी किताब निकाल कर श्रीविलास के सामने रख दी जिसके मुँह से उसे देखते ही एक ताज्जुब की आवाज निकल गई । शिवदत्त बोला, "क्यों, यही है न तुम्हारी वह किताब जो तुमने नन्हों से ली थी ?"

श्री० । (अच्छी तरह उलट पुलट कर उस किताब की जिल्द को देखते हुए) बेशक वही है । और इस समय इसका पुनः कब्जे में आ जाना कहता है कि हम लोगों की किस्मतों ने पुनः पलटा खाया है । लेकिन क्या इस किताब को भी दारोगा के ही कब्जे से आपके ऐयार उड़ा लाए ?

शिव० । हाँ ।

श्री० । और उसे कुछ खबर न हुई ?

शिव० । कुछ भी नहीं ?

श्री० । अगर कभी जान जायगा तो बेतरह नाराज होगा क्योंकि वह आपकी दोस्ती का दम भरता है ।

शिव० । भले ही भरता हो पर है असल में परले सिरे का स्वार्थी और मक्कार, मैं उसे खूब जान गया हूँ ।

श्री० । इसमें क्या शक है, मगर इस किताब को देख कर तो मेरी हिम्मत दूनी हो गई है और अब विश्वास होता है कि अगर हम लोग तिलिस्म में घुसे

तो जरूर कुछ न कुछ कर सकेंगे, खास कर अगर वह दूसरी किताब भी हमारे पास हो।

पुनः उसी बाजीगर वाली मुद्रा से शिवदत्त ने अपने दूसरे जेब में हाथ डाला और एक दूसरी किताब निकाल कर श्रीविलास के हाथ पर रख दी।

इस किताब को देख कर तो श्रीविलास की यह हालत हो गई कि वह सकते में आ गया और उसके मुँह से कोई आवाज तक न निकल सकी। बहुत देर तक वह कभी तो शिवदत्त और कभी उस किताब की तरफ देखता रह गया और शिवदत्त उसका ताज्जुब देख देख मुस्कुराता रहा। आखिर बड़ी कठिनता से श्रीविलास के मुँह से निकला—

श्री०। राजा साहब, आपकी खुशकिस्मती का कोई ठिकाना नहीं है। ये दोनों किताबें इकट्ठी आपके पास होना इस बात का सबूत है कि आपकी किस्मत चर्रा पड़ी है और आप बीरेन्द्रसिंह तो क्या बड़े बड़े राजाओं और महाराजाओं को अपने पैरों के नीचे देखेंगे। तिलिस्म की दौलत आपके काबू में होगी और एक से एक ऐसे अजूबा सामान करिश्मे और हथियार आपके खजाने में होंगे जिनकी बदौलत किसी दुश्मन की मजाल नहीं कि आपके सामने आँखें भी उठा सके। सचमुच आप धन्य हैं और भाग्यवान हैं, आपके जोड़ का किस्मतवर इस दुनिया में कोई न होगा।

श्रीविलास ने तारीफों का कुछ ऐसा अनोखा पुल बाँध दिया कि शिवदत्त जीता जागता स्वर्ग के हिंडोले झूलने लगा। देर तक वह केवल चुपचाप बैठा मुस्कुराता और श्रीविलास की बातें सुनता रह गया मगर यकायक श्रीविलास चौंक कर रुका और इधर उधर देख कर बोला, "हैं, यह आवाज कैसी?"

शिव०। (चारो तरफ देख कर) कहाँ, मैंने तो कुछ नहीं सुना।

श्री०। नहीं, जरूर कुछ आवाज हुई, और मुझे तो शक होता है कि कोई यहाँ छिपा खड़ा हमारी बातें सुन रहा है। (इधर उधर देख और नीचे बावली की तरफ झाँक कर) बेशक ऐसा ही है। राजा साहब, अपनी तलवार तो निकाल लीजिये, वह देखिये, हमारा दुश्मन वहां छुपा खड़ा है।

श्रीविलास ने उँगली से जिस तरफ दिखाया शिवदत्त बड़े गौर से उधर ही को देखने लगा पर अब पूरी तरह पर चाँदना रह न गया था क्योंकि सूरज अस्त हो चुका था और अंधेरी तेजी से झुकी चली आ रही थी जिससे बावली का जल की तरफ वाला हिस्सा अंधकारमय हो गया था। उसके मुँह से निकला, "कहाँ,

मैं तो किसी को नहीं देख रहा हूँ!" पर श्रीविलास उसकी बात अनसुनी कर झपट के बोला, "ठहर तो जा कम्बख्त, कहाँ जाता है!" और तब तेजी के साथ सीढ़ियाँ उतरता हुआ बावली के अन्दर चला। शिवदत्त ने अपने आदमियों को आवाज दी और बात की बात में वहाँ कई लोग आ पहुँचे जिन्होंने शिवदत्त के हुक्म से उस जगह नीचे ऊपर चारो तरफ तलाश करना शुरू कर दिया।

मगर ताज्जुब की बात थी कि उस बावली का कोना कोना छान मारने पर भी न तो उस चोर का ही पता लगा जिसे श्रीविलास ने देखा था और न स्वयम् श्रीविलास ही कहीं नजर आया। न जाने अपने दुश्मन को खोजता वह खुद भी कहाँ गायब हो गया था।

और इस वक्त पहिले पहल शिवदत्त को यह बात ख्याल आई कि उसकी दोनों तिलिस्मी किताबें श्रीविलास के पास थीं जब वह गायब हुआ। उसके मुँह से एक बड़ी लम्बी चीख निकल गई और वह एकदम बदहवास हो गया। बड़ी मुश्किल से उसने किसी तरह अपने को सम्हाला और जोर से बोला, "यारअली!!" चारो तरफ 'यारअली' की पुकार मच गई और कुछ देर बाद एक सिपाही ने सामने आ हाथ जोड़ कर कहा, "हजूर, यारअली साहब तो कहीं नजर नहीं आते और लोगों का कहना है कि वे हुजूर के पास उन साहब को पहुँचा कर ही कहीं चले गये और फिर लौट कर नहीं आये।"

शिवदत्त के मुँह से एक 'हाय' निकली और जोर से अपने माथे पर हाथ मार कर वह उसी जगह गिर गया। मगर उसकी कैफियत देख उसके नौकर चाकर और सिपाही मशालें बाल बाल कर चारो तरफ फैल गये और यारअली और श्रीविलास को खोजने लगे।

शिवदत्त का साथ छोड़ हम कुछ देर के लिए अब श्रीविलास के साथ होते हैं और देखते हैं कि वह कहाँ जाता और क्या करता है। शिवदत्त के पास से अलग हो वह तेजी के साथ दौड़ता हुआ सीधा उस जगह पहुँचा जहाँ वह गुप्त कोठरी और तिलिस्मी मुहाना था जिसका हाल हम पहले भी लिख आए हैं* और फुर्ती से रास्ता खोल उसके अन्दर घुस गया। अपने पीछे का रास्ता जल्दी से बन्द किया और तब अंधेरे ही में आगे की तरफ भागा, रोशनी करने के लिए भी न रुका क्योंकि उसे डर था कि शायद शिवदत्त को इस रास्ते का हाल मालूम

* इस कोठरी और सुरंग का हाल हम बहुत खुलासा तौर पर रोहतासमठ तीसरे भाग के आठवें बयान में लिख आये हैं।

हो और वह यहाँ आकर उसका पीछा करे।

इसमें शक नहीं कि उसे इस रास्ते का हाल अच्छी तरह मालूम था क्योंकि इस अजीब टेढ़े और बेढंगे रास्ते का बहुत काफी हिस्सा उसने एकदम अंधेरे में ही और वह भी बहुत तेजी के साथ तय किया, तथा तब तक दम न लिया जब तक कि एक बहुत लम्बा फासला अपने और शिवदत्त के बीच में डाल न दिया और यह विश्वास न हो गया कि अब शिवदत्त उसे जल्दी पा नहीं सकता। तब कहीं जाकर उसने अपनी चाल कम की और दौड़ना बन्द कर धीरे-धीरे चलने लगा बल्कि कुछ और आगे बढ़ जाने पर उसने रोशनी भी कर ली।

चलते चलते जब श्रीविलास उस चौमुहानी के पास पहुँचा जो इस सुरंग के बीचोबीच में पड़ती थी और जहाँ से कई तरफ को रास्ता फूट गया था तो वह चौंका। उसे अपने सामने की तरफ, यद्यपि कुछ दूरी पर, एक रोशनी नजर आई। गौर करने पर मालूम हुआ कि कोई आदमी रोशनी लिये हुए तेजी के साथ इस तरफ को चला आ रहा है। यह देखते ही वह ठमक गया और अपने हाथ की रोशनी बुझा कर उसी तरफ को बहुत गौर से देखता हुआ धीरे से बोला, "कोई आ रहा है, सिवाय गुरुजी के और हो ही कौन सकता है, फिर भी सावधान रहना चाहिए!"

जरूर उस आने वाले की निगाह भी श्रीविलास के हाथ वाली रोशनी पर पड़ चुकी थी क्योंकि इसने देखा कि वह चलते चलते ठमक गया और रोशनी के आगे हाथ रख कर गौर से उसी तरफ देखने लगा मगर इसी बीच इसने गौर से देख उस आने वाले को पहिचान लिया और बोला, "बेशक गुरुजी ही हैं।" और तब तेजी से आगे बढ़ा। कुछ ही देर में यह उसके पास पहुँच गया और श्रीविलास के साथ साथ अब हमने भी अच्छी तरह देख लिया कि वह आने वाले शेरसिंह हैं। श्रीविलास कुछ दूर ही था कि पुकार कर बोला, "गुरुजी मुबारक! एक नहीं बल्कि दो दो किताबें लीजिये और मुझे शाबाशी दीजिये!!"

शेरसिंह आगे बढ़ कर खुशी के साथ बोले, "हैं हैं, क्या कहा तुमने?" श्रीविलास बोला, "केवल रिक्तगन्थ ही नहीं अजायबघर की ताली भी उसी कम्बख्त के पास थी और मैंने दोनों ही को उड़ा दिया!" शेरसिंह तो यह सुनते ही इतना खुश हो गये कि मुश्किल से उनके मुँह से किसी तरह निकला, "देखें!" श्रीविलास ने दोनों ही किताबें उनके हाथ पर रख दीं और खुशी खुशी कहा, "कहिये यही हैं न दोनों वे किताबें जिनके लिए आप व्याकुल हो रहे थे!"

शेरसिंह ने खुशी भरे स्वर में कहा, "बेशक ये ही हैं और तुमने इस समय इतना बड़ा काम किया कि मैं तुम्हारी तारीफ नहीं कर सकता। इस समय केवल तुम्हारी पीठ ठोंक कर आशीर्वाद देता हूँ और ईश्वर से मनाता हूँ कि तुम इससे भी बड़े बड़े काम करो मगर फिर भी किसी मौके पर तुम्हारी भर पेट तारीफ करूँगा और तुम्हें बहुत बड़ा इनाम भी दूँगा।"

शेरसिंह ने दोनों किताबें अपनी जेब में डाल लीं और जोर से श्रीविलास की पीठ ठोंकी जिसने उनके चरण छूकर कहा, "आपके आशीर्वाद से बड़ा इनाम मेरे लिये क्या और कोई है! मगर आप बड़ी जल्दी में जान पड़ते हैं?"

शेरसिंह ने जवाब दिया, "मैं बेशक बहुत जल्दी बल्कि घबराहट में हूँ। मैंने सुना है कि महाराज दिग्विजयसिंह बहुत बड़ी मुसीबत में पड़ गये हैं और उन्हें जैसे भी हो इस समय मदद पहुँचानी ही पड़ेगी। इस समय मैं किले ही की तरफ जा रहा था और जल्दी से जल्दी तहखाने में पहुँचना चाहता हूँ इसलिए कैसे कैसे क्या हुआ और किस तरह ये दोनों नायाब किताबें तुम्हारे हाथ लगीं इसका हाल बाद में तुमसे सुनूँगा। इस समय वक्त बहुत थोड़ा है और खबर बहुत संगीन सुनने में आई है, एक पल भी बरबाद करने का मौका नहीं है। मैं सुरंग के रास्ते तहखाने में जाता हूँ, तुम बाहरी रास्ते से किले में पहुँचो और वहीं मुझसे मिलो। वहीं सब हाल खुलासा तुमसे सुनूँगा!"

श्रीविलास बोला, "वह खबर क्या....?" मगर शेरसिंह उसे रोक कर बोले, "बस इस वक्त एक बात भी मैं तुमसे न कहूँगा और जाता हूँ। तुम भी फौरन ही बाहर निकल जाओ और जहाँ तक जल्दी हो सके किले में पहुँचो।" कहते कहते शेरसिंह ने अपने हाथ वाली रोशनी गुल कर दी और उस चौमुहानी के पास जा अंधेरे ही में किसी तरफ को मुड़ गए। श्रीविलास के मुँह से निकला, "जरूर कोई संगीन खबर है, तभी गुरुजी इस कदर घबराए हुए हैं। मुझे भी उनकी आज्ञा माननी और किले में पहुँचना चाहिए।"

श्रीविलास आगे बढ़ना ही चाहता था कि पुनः ठमक कर रुक गया। सुरंग के अन्दर से उसे तेजी के साथ दौड़ते आने वाले किसी आदमी के पैरों की धमक सुनाई दी और कुछ ही देर बाद उसने तेजी से दौड़ कर आते हुए शिवदत्त के ऐयार यारअली को देखा जिसके हाथ में अद्भुत रोशनी की एक विचित्र लालटेन थी और जो बेतहाशा दौड़ता हुआ चला आ रहा था। श्रीविलास को सामने पा वह झपट कर इसके पास आया मगर हाथ वाली रोशनी की मदद से इसकी

सूरत देखते ही चौंका और बोला, "हैं, श्रीविलास तुम! जल्दी इशारा बताओ!" श्रीविलास ताज्जुब से बोला, "मैं, पानीफूल! और आप?" यारअली बोला, "सुधार्णव! जल्दी बताओ तुमने किसी को इधर से भागते जाते देखा है?" श्रीविलास घबरा कर बोला, "हैं, गुरुजी आप! आप अब आ रहे हैं! तो मैंने वे तिलिस्मी किताबें किसको दे दीं!" यारअली घबरा कर बोला, "क्या कहा तुमने! तिलिस्मी किताबें! किसको दे दीं तुमने?" श्रीविलास डरते डरते बोला, "अभी अभी आपकी असली शकल में कोई मुझसे मिला और मैंने उसे रिक्तगन्थ और अजायबघर की ताली दे दी जो शिवदत्त से उड़ा कर ले आया था!"

यारअली ने इतना सुनते ही माथे पर हाथ मारा और कहा, "गजब हो गया। वह मैं यानी शेरसिंह नहीं बल्कि मनोरमा का ऐयार साधोराम था जो मेरी सूरत बना हुआ किसी शैतानी की फिक्र में इस सुरंग में घुसा था। मैंने देख लिया और सोचा कि कहीं वह तुमको धोखा न दे इसलिए दूर से उसका पीछा किये दौड़ा आ रहा था पर आखिर वह अपनी वाली कर ही गुजरा! तुमने बहुत बड़ा धोखा खाया, किताबें देने बल्कि बातें करने से भी पहिले तुम्हें इशारा करके पूछ लेना चाहिये था। अब क्या जाने वह कम्बख्त हाथ आवेगा भी कि नहीं! किधर गया है वह?" श्रीविलास ने हाथ के इशारे से बताया और उसे अपने पीछे आने का इशारा कर यारअली या जिन्हें अब शेरसिंह कहना ही मुनासिब है तेजी के साथ उसी तरफ को दौड़े। पीछे पीछे सुस्त और उदास श्रीविलास बना हुआ उनका शागिर्द जगन्नाथ भी चला।

तीसरा बयान

इतने घने अंधकार में गोपालसिंह इस समय थे कि एक बार तो उनकी तबीयत घबरा गई पर वे अपना दिल मजबूत किये जमे हुए बैठे रहे और राह देखते रहे कि अब क्या होता है।

वह मूरत ऐसी विशाल थी कि भीतर से उसका पेट एक बहुत बड़े कमरे के मानिन्द था जिसे यद्यपि अंधकार के कारण गोपालसिंह समझ नहीं सकते थे पर फिर भी इतना जरूर सुन रहे थे कि उनके आस पास एक अजीब किस्म का शोरगुल पैदा हो रहा है। जिस तरह किसी बहुत बड़े कल पुर्जे के घूमने से आवाज होती है उसी तरह की आवाज उनके चारो तरफ पैदा हुई और शीघ्र ही इतनी ज्यादा बढ़ गई कि उनके कानों के पर्दे फटने लगे। आवाज के ढंग से यह

भी समझ गये कि बाहर जब वे थे तो जो आवाज उनके सुनने में आई थी वह भी यही थी पर उस समय वह कहीं दूर से आती जान पड़ती थी और इस समय उनके आस पास और चारो ही ओर बहुत नजदीक ही में कहीं हो रही थी, इतनी नजदीक कि गोपालसिंह को भय मालूम हो रहा था कि अगर वे अपना कोई अंग हिलावेंगे तो कहीं उन चलते फिरते पुर्जों में फंस न जायें।

कल पुर्जों के चलने की तेजी और बढ़ी और अब धीरे धीरे उस जगह एक रोशनी पैदा हुई। सिर उठा कर गोपालसिंह ने देखा तो जान पड़ा कि उनके सिर के उपर, उस जगह जहाँ अन्दाज से उन्होंने खयाल किया कि उस विशालाकृति मूरत का सिर होगा, एक रोशनी पैदा हो रही है जो धीरे धीरे तेज होती जा रही है। यह रोशनी भी कुछ अजीब ढंग की थी और किसी चीज या एक केन्द्र से नहीं निकल रही थी बल्कि गोलाकार चारो तरफ घूमी हुई थी और कुछ कुछ ऐसा जान पड़ता था मानों एक मोटा रस्सा किसी कूएँ के चारो ओर लटका हुआ जल रहा हो। ऊँचाई और दीवारों पर गौर किया तो उस बढ़ती जाने वाली रोशनी की मदद से यह भी दिखाई पड़ा कि वे जिस जगह पर हैं उसका ऊपर वाला हिस्सा तो एक गहरे कूएँ की शक्ल का है और नीचे वाला हिस्सा उस बहुत बड़े गोल कमरे की शक्ल का जिसका पेटा किसी तरह बीस हाथ से कम न होगा।

ऊपर वाली गोल रोशनी तेजी से बढ़ने लगी और धीरे धीरे इतनी ज्यादा बढ़ गई कि अब उस पर निगाह ठहराना कठिन हो गया और ऊपर ताकने से आँखें चौंधियाने लगीं। मगर उसी रोशनी की मदद से अब जिस जगह गोपालसिंह थे यहाँ का भी सब हाल चाल स्पष्ट दिखाई देने लगा और अब गोपालसिंह को पता लगा कि वे कैसी भयानक जगह में हैं! उन्होंने देखा कि उनके चारो तरफ और ऊपर भी काफी ऊँचाई तक, अजीब अजीब तरह के कल पुर्जे चर्खे पहिये और यन्त्र चल रहे हैं जिनके बीच बीच में अजीब अजीब तरह के हथियार भी चलते घूमते और हरकत करते हुए नजर आ रहे हैं। कहीं चक्र, कहीं नुकीले और तेज धार वाले बरछे, कहीं दुधारी तलवारें, कहीं भुजालियाँ, कहीं कटारें, कहीं तेगे और कहीं गदाएँ इस तरह चल रही थीं मानों सब के पीछे एक एक हाथ हो जो उसको सब तरफ भांज रहा हो, ठीक उसी तरह जिस तरह लड़ाई में बहादुर लोग इन अस्त्रों को चलाते हैं। अवश्य ही ऐसे कोई हाथ नजर न आते थे पर उन अस्त्रों का चलना उसी ढंग पर था।

ऊपर वाली रोशनी की तेजी और भी बढ़ी और अब बीच में भी कई जगह रोशनी के गोले चमकने लग गये जिनकी मदद से गोपालसिंह ने एक और भी अजीब बात देखी जो यह थी कि वे इस कूएँ या गोल कमरे के पेंदे में और जमीन पर नहीं थे बल्कि एक दम अधर में थे और उनके नीचे भी कई हाथ तक उन्हीं चलते हुए कल पुर्जों और हथियारों का सिलसिला नजर आ रहा था। गौर से देखने पर मालूम हुआ कि कई हाथ नीचे जाकर बीचोबीच में कुछ जगह खाली छूटी हुई है मगर उसके चारो तरफ भी उन्हीं हथियारों का गोल चक्कर चल रहा है। सहसा गोपालसिंह के मन में एक खयाल दौड़ गया—अगर किसी आदमी को उस बीच वाली जगह में छोड़ दिया जाय तो ये भयानक हथियार पल भर में उसके बदन की कुट्टी करके छोड़ देंगे अगर वह जरा भी इधर से उधर हिला*। इस खयाल के साथ ही उनके मुँह से निकला, "कहीं अन्धकूप इसी जगह का नाम तो नहीं है! हाँ, बेशक ऐसा ही है, और जरूर यही वह भयानक जगह है जिसका जिक्र मैं तिलिस्मी किताबों में कई जगह पढ़ चुका हूँ।"

और अब एक नया खयाल गोपालसिंह के मन में दौड़ गया। वे इस भयानक जगह के न तो नीचे हैं और न ऊपर बल्कि एक दम अधर में रुके हुए इस जगह को देख रहे हैं, सो ऐसा क्योंकर सम्भव है? क्या वे बीचोबीच किसी झूले की सी चीज के साथ लटक रहे हैं? नहीं, ऐसा तो नहीं है। वे तो एक तिलिस्मी चिड़िया की पीठ पर हैं और उस चिड़िया ने उस भयानक मूरत के पेट के अन्दर घुस कर उन्हें पहुँचाया है। तब वे या उनकी आधार वह चिड़िया इस तरह बीचोबीच में रुके हुए किस तरह पर हैं? गोपालसिंह ने अपने चारो तरफ निगाह घुमाई। कोई रस्सी तार या जंजीर जैसी चीज तो उन्हें नजर न आई जो उन्हें अधर में रोके रहती पर इतना जरूर देखा कि उस चिड़िया के पंख एक अजीब किस्म से हरकत कर रहे हैं जिनसे यद्यपि आवाज तो कोई निकल नहीं रही है या अगर निकलती भी हो तो उन कल पुर्जों के भयंकर आवाज में दब गई है, पर उसी की बदौलत वह चिड़िया अधर में इस तरह पर रुकी हुई है जिस तरह पर कोई बगुला किसी तालाब की मछली के पुनः निकलने की ताक में उस जगह के ऊपर मँडराता रहता है जहाँ पर उसने उसको आखिरी बार निकलते देखा था। गोपालसिंह के मुँह से निकला, "यद्यपि तिलिस्मी किताबें ऐसा ही कहती हैं

* पाठक इस स्थान को देख चुके हैं। भूतनाथ को इन्द्रदेव ने इसी जगह का तमाशा दिखाया था—देखिए भूतनाथ दसवाँ भाग, पाँचवाँ बयान।

पर क्या सचमुच इस चिड़िया में मुझको लेकर उड़ चलने की सामर्थ्य है?"

गोपालसिंह यह सोच ही रहे थे कि जोर की एक खटके की सी आवाज आई और उनके कोई पाँच छः हाथ ऊपर और सामने की तरफ कोई खिड़की या दर्वाजा सा खुलता हुआ नजर आया। यकायक गोपालसिंह को कुछ खयाल आ गया और उनके मुँह से निकला, "ओह, मैं तो अपना काम ही भूल रहा था।" उन्होंने पीछे की तरफ हाथ करके उस चिड़िया के दुम के साथ कुछ किया जिसके साथ ही उसके पंख कुछ तेजी से हरकत करने लगे और वह उन्हें लिए हुए धीरे धीरे ऊपर की तरफ को उठी।

गोपालसिंह उस चिड़िया की पीठ पर जम कर बैठ गये और वह उन्हें लेकर ऊपर को उठी। जब वह उस खिड़की के सामने पहुँची जो ऊपर खुलती नजर आई थी तो गोपालसिंह ने पुनः कुछ किया और वह आगे की तरफ बढ़ी, यहाँ तक कि उस खिड़की के बिल्कुल पास आ गई। गोपालसिंह ने देखा कि वह कोई खिड़की नहीं बल्कि एक बड़ी आलमारी है जिसके अन्दर चाँदी की बनी हुई एक परी की मूरत खड़ी है। इस मूरत के दोनों हाथों में से एक में तीन तीर और दूसरी में एक कमान था। गोपालसिंह ने अपनी कमर से तिलिस्मी तलवार निकाली और उस पुतली की नाभी से छुलाए हुए ही दूसरा हाथ बढ़ा कर वह कमान और तीर उसके हाथ से ले लिए। इसके बाद तलवार ठिकाने रक्खी और पुनः हाथ पीछे कर कुछ किया जिससे वह चिड़िया इन्हें लेकर कुछ पीछे हटने बाद नीचे की तरफ उतरने लगी, यहाँ तक कि पुनः अपने पहिले वाले ठिकाने पर आ गई।

अब गोपालसिंह ने गौर के साथ अपने चारो तरफ देखना शुरू किया, साथ ही साथ उनके न जाने किस इशारे पर वह चिड़िया भी ऊपर नीचे अगल बगल और इधर उधर उतरने और घूमने लगी। आखिर एक जगह पहुँच कर गोपालसिंह रुके और अपने सामने की तरफ खूब गौर से देख कर धीरे से बोले, "एक तो जरूर यही है।"

जिस चीज को गोपालसिंह देख रहे थे वह एक मछली थी जो किसी पतली तार या रस्सी द्वारा उनसे कुछ ही दूरी पर लटकती हुई धीरे धीरे अपने चारो तरफ घूम रही थी। गोपालसिंह ने उस पुतली के हाथ से लिए हुए कमान पर उसी का एक तीर चढ़ाया और बड़े गौर से होशियारी के साथ, निशाना साध कर तीर छोड़ दिया। ईश्वर की कृपा से तीर निशाने पर गया और वह रस्सी या तार कट गई जिसके सहारे वह मछली लटक रही थी। मछली अपनी जगह

से गिरी और अपने ठीक नीचे चलती हुई किसी बहुत बड़ी कल के अन्दर जाकर फँस गई, साथ ही उस कल का चलना बन्द हो गया और वहाँ की आवाज और शोरगुल में कुछ कमी आ गई। गोपालसिंह ने देखा कि उनसे बहुत नीचे जो हथियार चल रहे थे उनमें से भी कई रुक गए और अपनी जगह पर खड़े हो गये।

गोपालसिंह ने पुनः उस चिड़िया के साथ कुछ किया और उनकी तर्कीब की बदौलत वह इधर से उधर ऊपर नीचे और आगे पीछे घूमने फिरने लगी। पहिली जगह से बहुत नीचे उतर कर गोपालसिंह को एक जगह पुनः एक वैसी ही मछली उसी तरह लटकती नजर आई और इसको भी उन्होंने अपने तीर का निशाना बनाया। वह भी कट कर नीचे गिरी जिससे उसके नीचे चलने वाली एक कल का घूमना बन्द हो गया और उस तरफ चलने वाले हथियारों में से भी कितने ही चलते चलते रुक गए। वहाँ की आवाज में और भी कमी आ गई।

अब पुनः गोपालसिंह ने एक तीसरी मछली की तलाश शुरू की। इसको उन्होंने अपने से बहुत ऊपर, करीब करीब कूएँ की सी उस जगह के ऊपरी हिस्से के पास लटकता हुआ पाया और इसे भी अपने तीर का निशाना बनाया। जैसे ही यह मछली कट कर गिरी बाकी के कल पुर्जों और हथियारों का चलना भी बन्द हो गया और उस जगह एकदम सन्नाटा हो गया। वे रोशनियाँ जो उस जगह जल रही थीं वे सब की सब भी एकाएक बुझ गईं और उस जगह पुनः वैसा ही घोर अन्धकार छा गया जैसा इस जगह पहिले पहल आने पर गोपालसिंह ने पाया था।

कुछ देर तक गोपालसिंह चुपचाप रहे, इसके बाद उन्होंने अपने ऊपर की तरफ निगाह की। देखा कि उस कूएँ जैसी जगह के एक किनारे और एकदम सिरे पर जहाँ पहिले एक गोलाकार रोशनी देखी थी मगर जो भी और रोशनियों के साथ ही बुझ गई थी, धीरे धीरे कुछ रोशनी पैदा हो रही है। यह रोशनी किसी और चीज की नहीं बल्कि स्वाभाविक थी और शायद पहिले भी रही होगी मगर अन्य तेज रोशनियों की आड़ में दबी होने के कारण पहिले इस पर निगाह न पड़ी थी। गोपालसिंह ने अपनी तिलिस्मी चिड़िया के साथ कुछ किया और वह इनको लिए हुए ऊपर की तरफ उठने लगी।

धीरे धीरे, और एक अजब अदा के साथ उठती हुई वह चिड़िया गोपालसिंह को उस कूएँ जैसी जगह के बाहर ले आई और जब वे उस कूएँ के मुँह के पास पहुँचे तो यह देख उनको बेहद ताज्जुब हुआ कि इसके चारो तरफ खड़े कई

आदमी उस कूएँ के अन्दर झाँक रहे हैं और उनको इस तरह पर उस कूएँ के बाहर निकलते देख अब ताज्जुब के साथ आपुस में एक दूसरे से कुछ बातें करने लगे हैं। इस भयानक तिलिस्म के अन्दर ये आदमी कहाँ से आ गए यही सोचते हुए गोपालसिंह ने अपनी चिड़िया की गति को रोका और उसे उसी कूएँ की जगत पर खड़ा कर अपने चारो तरफ देखने लगे। पहिली निगाह उनकी जिस आदमी पर पड़ी उसे देखते ही वे चौंक गए। यद्यपि यकायक वे उसे पहिचान न सके क्योंकि बेहद बढ़ी हुई दाढ़ी मोछों ने उसकी सूरत को एकदम बदल रक्खा था, मगर दूसरे ही क्षण में जब उनके पास में ही खड़ी एक दूसरी सूरत पर उनकी निगाह पड़ी तो वे एक दम ही चीख पड़े और उनके मुँह से बेहताशा निकल पड़ा, "हैं—चाचाजी! और चाचीजी आप भी! क्या मैं सचमुच आप लोगों को ही देख रहा हूँ या नींद में हूँ!" मगर उन्हें कोई शक न रह गया जब उन्हें भैयाराजा की गम्भीर आवाज सुनाई पड़ी जो यह कह रहे थे—"नहीं बेटा, सचमुच हमीं लोग बहुत दिनों से यहाँ फँसे तुम्हारे आने का इन्तजार कर रहे थे और इस समय अद्भुत ढंग से तुम्हें प्रकट होते देख ताज्जुब में पड़ गये हैं।" गोपालसिंह उस चिड़िया की पीठ से कूद कर भैयाराजा के पैरों पर जा गिरे और उन्होंने उन्हें उठा कर कलेजे से लगा लिया।

बड़ी कठिनता से गोपालसिंह के मुँह से निकला, "चाचाजी, आप मुझ दास को एकदम से इतना भूल गये!" अपने आँसू पोछते हुए भैयाराजा ने जवाब दिया, "नहीं बेटा, बल्कि तुम ही हमलोगों को एकदम से भूल गये और आज इतने बरसों के बाद तुमको हमारी याद आई है!" गोपालसिंह की आँखों से चौधारे आँसू गिरने लगे और वे अपने प्यारे चाचा की छाती से लिपट इस तरह रोने लगे जैसे कोई छोटा बच्चा जो किसी कारण से बहुत ही हदस गया है, रोता हो। उन्हें भैयाराजा का अपने प्रति प्रेम और वे सुख की घड़ियाँ याद आ रही थीं जो उनके रहते गुजरी थीं और साथ साथ वे मुसीबतें और आफतें भी याद आ रही थीं जिनमें उनकी जिन्दगी का पिछला भाग बीता था।

बड़ी मुश्किल से ठीक एक छोटे बच्चे की ही तरह पुचकार पुचकार और दुलार कर भैयाराजा ने किसी तरह अपने प्यारे भतीजे को शान्त किया और उसे अपने कलेजे से हटाते हुए बोले, "तुम पहिले अपनी चाची से मिल लो नहीं तो वे मारे खुशी के पागल हो जाएँगी।" गोपालसिंह भैयाराजा को छोड़ अपनी चाची 'बहूरानी' के पैरों पर जा गिरे जिन्होंने उनको उठा कर अपने कलेजे से

लगा लिया और चौधारे आँसुओं से उनका सिर तर करती हुई बोलीं, "बेटा
गोपाल, इतने दिनों पर तुमको हम दुखियों की याद आई !" गोपालसिंह ने रोते
हुए कहा "चाचीजी बेशक मुझसे बहुत बड़ा अपराध हुआ—पर आपको नहीं
मालूम कि इस बीच में मुझ पर क्या क्या गुजरी है। मैं दुनिया में किसी को मुँह
दिखाने लायक नहीं रह गया हूँ और लोगों की निगाहों में मुर्दा मशहूर हूँ।"
चमक के बहुरानी ने गोपालसिंह को अपने कलेजे से अलग किया मगर
दोनों हाथों से पकड़े पकड़े ही उनका मुँह देखती हुई बोलीं, "इस बात का क्या
मतलब ?" गोपालसिंह ने सिर जमीन की तरफ झुका कर कहा, "मेरी स्त्री
व्यभिचारिणी हो गई, दुनिया की निगाहों में उसने मुझे मार डाला, और अपनी
कैद में रख कर मुझको हर तरह से सताया।"
बहुरानी चौंक कर बोलीं, "यह क्या बात ! तुम्हारी शादी तो बलभद्रसिंह
की बड़ी लड़की लक्ष्मीदेवी से न होने की बात थी ?" गोपालसिंह सिर झुकाए
हुए ही बोले, "जी हाँ उसी से हुई !" बहुरानी ने सिर हिला कर कहा, "हो
नहीं सकता ! बलभद्रसिंह की किसी लड़की से मैं यह आशंका कर ही नहीं
सकती ! जरूर बेटा इसमें किसी जगह कहीं कुछ दगा है !"
इसी समय भैयाराजा बोल उठे, "खैर वह सब जो कुछ होगा देखा जायगा,
तुम गोपाल इनसे तो मिलो जो तुम्हारे लिए घबरा रहे हैं। गोपालसिंह ने घूम
कर देखा और पुजारीजी को खड़ा पा लपक कर उनके पैरों पर अपना सिर
रक्खा। उन्होंने उठा कर अपनी छाती से लगाया और आशीर्वाद देकर बोले,
"बहुत दिनों के बाद वह शुभ घड़ी आई है जिसकी हमलोग उतावली से राह
देख रहे थे। मगर अब तुम किसी बात की चिन्ता न करो, तुम जिन्हें मुसीबत
समझ रहे हो वह तुम्हारी शिक्षा का एक अंग था और अब हर तरह से तप कर
तुम विशुद्ध स्वर्ण की तरह चमकोगे ! देखो जरा इनसे मुलाकात कर लो।"
अपने दोनों हाथों से पकड़ कर पुजारीजी ने गोपालसिंह का सिर बगल की
तरफ घुमा दिया और पास ही खड़े दामोदरसिंह को देख गोपालसिंह ताज्जुब से
बोल उठे, "हैं, आप और यहाँ !" दामोदरसिंह ने गोपालसिंह को छाती से लगाते
हुए कहा, "हाँ मैं ही हूँ और केवल मैं ही नहीं, कुछ और लोग भी अभी बाकी
हैं जो आपको देखने को व्याकुल हो रहे हैं मगर उनसे आपकी भेंट कुछ समय
के बाद होगी।"
गोपालसिंह ने यह सुन आश्चर्य और प्रश्न की दृष्टि भैयाराजा पर डाली

जिन्होंने दामोदरसिंह को हाथ के इशारे से रोका और इनसे कहा, "उनसे भी
शीघ्र ही भेंट होगी, पहिले तिलिस्मी कार्रवाई जो बाकी है उसे पूरा कर लो।"
पुजारीजी बोले, "हाँ देर हो जाने से काम में विघ्न पड़ सकता है !" गोपाल-
सिंह ने सिर झुका कर कहा, "जो आप लोगों की आज्ञा, मगर क्या मैं उनका
नाम भी नहीं जान सकता !" भैयाराजा ने गम्भीरता से सिर हिला कर कहा,
"अभी उतना भी नहीं !" गोपालसिंह उदासी से बोले, "जैसी आपकी आज्ञा,
जरूर इसमें भी आप मेरा कुछ भला ही सोचते होंगे।" पुजारीजी ने कहा,
"बेशक ऐसी ही बात है, और तुम उनका नाम जानने की जल्दी न करके आगे
की कार्रवाई प्रारम्भ कर दो, देर करना हानिकारक होगा। अच्छा यह तो कहो,
तुम्हारी दोनों तिलिस्मी किताबें यानी तालियाँ तो समाप्त हो चुकी होंगी ?"
गोपालसिंह ने जवाब दिया, "जी हाँ, पहिली की मदद से इस तिलिस्म का
पहिला दर्जा मैंने तोड़ा और दूसरी की मदद से दूसरा दर्जा, इस तीसरे दर्जे में
इस जगह आने के पहिले मुझे वे दोनों किताबें उस चक्रधर के सुपुर्द कर देनी
पड़ीं जो मेरे सामने ही उन्हें चबा गया।"

पुजारीजी बोले, "ऐसा तो होना ही था, पर अभी भी एक तिलिस्मी ताली
तुम्हारे पास बचनी चाहिए जिससे तुम इस तिलिस्म का चौथा दर्जा खोलोगे !"
गोपालसिंह ने अपनी जेब से वही बड़ी चाभी जिससे पहिले कई जगह काम ले
चुके थे निकाली और दिखाते हुए कहा, "जी हाँ, यह एक चाभी मेरे पास बची
है और तिलिस्मी किताबों ने मुझको बताया है कि यह चौथा दर्जा खोलने के
काम में खर्च हो जायगी !"

पुजारीजी ने वह चाभी गोपालसिंह के हाथ से ले ली और गौर से देखने के
बाद पूछा, "यह चाभी तुम्हें कहाँ मिली ?" गोपालसिंह ने जवाब दिया, "अजा-
यबघर की ड्योढ़ी में फाटक के सामने जो पुतली है उसके हाथ से लेकर बूआजी
ने इसे मुझको दिया था।" पुजारीजी ने ताली को पुनः गौर से देखा और तब
विचित्र भाव से गर्दन हिला उसे भैयाराजा के हाथ में देते हुए गोपालसिंह से
पूछा, "पुतली के हाथ में तो एक किताब भी रहती थी ?" गोपालसिंह ने जवाब
दिया, "उसे बूआजी ने अपने पास रख लिया और कहा कि इसकी तुमको जरू-
रत न पड़ेगी।" पुजारीजी गम्भीर भाव से बोले, "उसने गलती की, उसे यह
ताली भी अपने ही पास रखनी थी। क्यों भैयाराजा, तुम क्या खयाल करते हो ?"
भैयाराजा बोले, "बेशक ऐसा ही है, मगर....(गोपालसिंह से) क्या इस तिलिस्म

को तोड़ने के काम में देवीरानी तुम्हारी मदद कर रही हैं ?"

गोपालसिंह ने जवाब दिया, "जी हाँ, शुरू से आखीर तक वे ही मेरे साथ हैं और उन्हीं की कृपा से मैं यहाँ तक का तिलिस्म तोड़ने में सफल हुआ हूँ। मगर आप लोग अब जिस तरह की बातें कर रहे हैं उससे भी मुझे सन्देह होने लगा है। क्या बूआजी से कुछ गलती हो गई है और आगे का काम पूरा करने में यह ताली मेरी मदद न करेगी ?"

भैयाराजा और पुजारीजी ने गम्भीर निगाहें एक दूसरे पर डालीं पर दोनों में से किसी ने भी कुछ कहा नहीं और चुप रहे। गोपालसिंह का सन्देह और भी बढ़ा और वे कुछ घबड़ा कर बोले, "आखिर बात क्या है, आप लोगों की चुप्पी और भी सन्देह में डाल्ती है ?" आखिर कुछ सोच समझ कर पुजारीजी ने जवाब दिया, "बेटा गोपाल, हम लोग तुम्हारे मन में कोई सन्देह पैदा करना नहीं चाहते और सच तो यह है कि स्वयं भी ठीक ठीक कुछ नहीं जानते, पर इतना मैं बता सकता हूँ कि वह पुतली जिस ताली और किताब को अपने हाथों में लिए हुए थी वह तिलिस्म तोड़ने वाले के लिए नहीं बल्कि जो उसकी सहायता पर हो उसके लिए थी। चूँकि देवीरानी इस काम में तुम्हारी मदद पर थी इसलिए इन दोनों चीजों को उसे ही अपने पास रखना चाहिए था। इसी से मुझे सन्देह होता है कि शायद इस ताली से तुम आगे का काम न कर सको और यह ताली अपने पास न रखने की वजह से मुमकिन है कि देवीरानी भी अब तुमसे मिल न सके और तुम्हारी कोई मदद न कर सके। पर खैर घबराने की कोई बात नहीं है। इस तिलिस्म का तुम्हारे हाथ से टूटना निश्चित है और आज नहीं तो कल तुम्हीं इसको तोड़ोगे। भगवान का नाम लो और आगे बढ़ो, देखो क्या होता है, अभी पक्के तौर से कोई भी कुछ कह नहीं सकता !"

गोपालसिंह यह सुन भैयाराजा का मुँह देखने लगे जिन्होंने इस पर कहा, "पुजारीजी जो कुछ कह रहे हैं वह ठीक है और यह भी बहुत ठीक है कि हम लोगों में से कोई भी निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता। तुम परमात्मा का नाम लेकर आगे बढ़ो और अपनी किस्मत पर भरोसा करो।"

गोपाल०। और आप लोग ?

भैया०। हम लोग इसी जगह रुके हुए तुम्हारा इन्तजार करेंगे।

गोपाल०। यदि आप चाहें तो मैं आपको इस जगह के बाहर कर सकता हूँ।

भैया०। बेशक बेटा तुम ऐसा कर सकते हो, पर अभी हमारी बाहर निक-

लने की इच्छा ही नहीं है ? तुम चौथा दर्जा तोड़ कर उसमें जो लोग फँसे हैं उनको भी छुड़ा लो तो हम लोग एक साथ ही इस जगह के बाहर होंगे ! अब तुम देरी न करो और आगे का काम शुरू करो।

गोपाल०। जैसी आपकी आज्ञा, मैं 'ना' करने की जुरंत नहीं रखता और अभी आगे की कार्रवाई में हाथ लगाता हूँ—मगर कम से कम इतना तो बता दीजिए कि आप यहाँ कब से और कैसे आ फँसे हैं ? उस दिन, यद्यपि उसको बरसों बीत गए मगर मुझे यह बात इस तरह याद है जैसे अभी कल ही की बात हो—आपने मुझे अजायबघर में मिलने के लिए बुलाया* मगर स्वयं न आए और तब से आज तक फिर मैंने आप लोगों की सूरत न देखी, अब आज देख रहा हूँ।

भैया०। अब और क्या कहूँ, बस यही समझ लो कि दुष्ट दारोगा की चाल लग गई और उसने हम लोगों को तिलिस्म में बन्द कर दिया। पूरा हाल तो फिर किसी वक्त मुझसे सुनना पर संक्षेप यह है कि इस चक्रव्यूह में आने जाने का रास्ता वही विशाल मूरत है जिसके आगे एक चक्र चलता रहता है और जिसके पेट में से होकर तुम यहाँ आ रहे होवोगे। बाहर वाले बड़े फाटक के सामने जो पुतली है—वही जिसके हाथ वाली चाभी इस समय तुम्हारे पास है—उसके साथ कुछ कर देने से वह विशाल मूरत शान्त रहती है और यहाँ आने जाने वालों का कुछ बिगाड़ नहीं करती, पर वही तर्कीब अगर उलट दी जाय तो जो भी उसके सामने पड़ जाय उसको पकड़ कर अपने पेट यानी तिलिस्म में डाल देती है। किसी तरह कम्बख्त दारोगा को यह बात मालूम हो गई थी और मैं इससे अनजान रहा कि वह इस भेद को जानता है। मैंने पुतली के साथ वह तर्कीब की और किसी काम से उस मूरत के सामने गया पर दारोगा अपनी कार्रवाई कर गुजरा जिसका नतीजा यह निकला कि उस मूरत ने हम दोनों को पकड़ कर अपने मुँह में डाल लिया और तभी से हम लोग इसी जगह बन्द हैं।

गोपाल०। उस नाले वाले रास्ते से तिलिस्म के अन्दर जाकर जब मैं आपसे मिला था तो आपने मुझको एक दिन अजायबघर में मिलने को बुलाया था। वहाँ मैं गया तो मैंने दूर से ही दो व्यक्तियों को आते हुए देखा जो उस मकान तक जरूर आए पर फिर न जाने कहाँ गायब हो गए.......

भैया०। वह मैं ही था और तुम्हारी चाचीजी मेरे साथ थीं। उस समय

* देखिए भूतनाथ आठवाँ भाग, चौथा बयान।
† देखिये भूतनाथ आठवाँ भाग, नौवाँ बयान।

हम लोग एक दूसरा काम निपटाते हुए बाहर ही बाहर उस तरफ आ रहे थे। जब अजायबघर के पास पहुँचे तो मुझे पता लगा कि यहाँ पर दारोगा ने हम लोगों के लिए जाल फैलाया हुआ है—मैं समझता हूँ उसे किसी तरह हमारे आने का पता लग गया था........

गोपाल० । मैंने आपकी बात भरतसिंह से कही थी, शायद उसने कहीं छिप कर सुन लिया हो ।

भैया० । जो कुछ भी हो, अस्तु उसकी चालों से अपने को बचाने की नीयत से मैं बाहर से सीधा 'डचोढ़ी' में चला गया परन्तु वहाँ भी उस कम्बख्त की कार्रवाई लग गई और हम दोनों इस जगह आ फँसे । कुशल इतनी ही हुई कि उस कम्बख्त के हाथ न पड़े नहीं तो वह न जाने हमारी क्या दुर्दशा करता ।

गोपाल० । (दाँत पीस कर) वह उसके मुकाबले में कुछ भी न होगी जो अब मैं उस हरामजादे की करूँगा । (घूम कर) अच्छा पुजारीजी आप यहाँ कैसे ?

पुजारी० ।(हँस कर) अपनी बेटी नन्हों की कृपा से । उसे तिलिस्म की सैर करने और वहाँ की चीजों का मजा लेने की चाट लग गई थी और मेरे रहते वह पूरी न हो सकती थी इससे भूतनाथ को उल्लू बना कर मुझे तिलिस्म में फँसा चुकने बाद आप उसके भीतर घुसी मगर कर ही क्या सकती थी—आखिर बैरंग लौटना पड़ा, मगर मैं जरूर बरसों के लिये मजबूर हो गया ।

गोपाल० । आप जैसे तिलिस्मी मामलों में जानकार आदमी को....?

पुजारी० । शिवगढ़ी वाले मकान के पास एक कूआँ है। वह कूआँ नहीं असल में तिलिस्म में आने जाने का एक रास्ता है । कम्बख्त नन्हों के कहने से भूतनाथ ने मुझे बेहोश करके उसी कूएँ में डाल दिया* जहाँ से अवश्य ही कुछ घण्टों के बाद मैं बाहर निकल आता पर दुर्भाग्यवश उसी समय कम्बख्त दिग्विजयसिंह उस कूएँ में आ मौजूद हुआ जो अपने किसी मतलब से तिलिस्म में घुसा था । उसने मुझे वहाँ देख बदला लेने का मौका अच्छा समझा और मुझे ऐसे चक्कर में फँसा दिया कि बिना तिलिस्म टूटे मैं बाहर निकलने में एक दम असमर्थ हो गया ।

भैया० । (चौंक कर) दिग्विजयसिंह की यह करतूत थी ! आपने कैसे जाना ?

पुजारी० । तिलिस्म में बन्द करने के लिए उसने मुझको एक नाचने वाली पुतली के साथ बाँध दिया । जब मैं होश में आया तो मैंने देखा कि मेरे हाथ पाँव तो भूतनाथ की कमन्द द्वारा बँधे हैं और मेरा शरीर एक रेशमी पटूके के द्वारा

* देखिए रोहतासमठ पहिले भाग का अन्त ।

उस पुतली के साथ बँधा हुआ है । उस पटूके को देखते ही मैं पहिचान गया कि दिग्विजयसिंह का है ।

भैया० । (चमक कर) ओह, बड़ी गलती हो गई ! जब मैं आपको खोजने चला और तिलिस्म में न घुस सकने के कारण वापस लौट रहा था तो मुझे अंधेरे में एक आदमी मिला जो मुझे देखते ही एक चीख मार कर पिछले पाँव भागा† । मुझे उसकी चीख सुन दिग्विजयसिंह का खयाल हुआ और मैं यदि चाहता तो उसे पकड़ सकता था पर यह कब खयाल था कि वह आपके खिलाफ इतनी बड़ी कार्रवाई करके भाग रहा होगा ! नहीं तो यदि मैं उसे उसी समय पकड़ लिये होता तो सब मामला वहीं जाहिर हो जाता और यह बरसों की मुसीबत न आपको झेलनी पड़ती और न मुझको !

पुजारी० । ठीक है, पर हमारी किस्मतों में जो कुछ बदा था वह कैसे मिट सकता था ! और फिर सच तो यह है कि तिलिस्म टूटने का वक्त तो अब आया था और मैंने उसी वक्त जल्दी मचानी शुरू कर दी थी,अस्तु नतीजा भी भोगना पड़ा।

गोपाल० । (दामोदरसिंह की तरफ देख कर) और आपको तो जरूर कम्बख्त दारोगा ही ने....

दामो० । जी हाँ, उसने अपनी गुप्त कमेटी के मेम्बरों पर इस कदर रंग गाँठ लिया कि वे उसके कहे अनुसार काला सफेद सभी कुछ करने पर तैयार हो गए जो मुझे पसन्द न आया । कमेटी के नियमानुसार उसके भेद को कभी न खोलने की मैं कसम खा चुका था पर उसका पूरा पूरा हाल, मेम्बरों की फिहरिस्त, मुखिया लोगों के नाम और उसकी कर्तूतें आदि सब कुल हाल एक सन्दूकड़ी में रख मैंने अपनी लड़की के सुपुर्द कर दिया और तब दारोगा का विरोध करना शुरू किया जिससे अगर वह मुझको कभी मार डाले तो उसका भी भण्डा फूट जाय, पर वह कम्बख्त मुझे तिलिस्म में बन्द कर गया और आप अब तक चैन कर रहा है। फिर मुझे यह भी मालूम न हो सका कि उसने उस सन्दूकड़ी और मेरी लड़की या नतनी के साथ ऐसी क्या करतूत की कि उसका जरा भी भेद प्रकट न हुआ और वह अछूता बच गया ।

गोपाल० । उसने अपने ऐयार भेज कर आपकी लड़की नतनी और वह सन्दूकड़ी, तीनों ही चीजों पर कब्जा कर लिया और जहाँ तक मैं समझता हूँ वे अभी तक उसी के कब्जे में हैं ।

दामो० । बेशक ऐसा ही होगा, इन्द्रदेव ने भी मुझको ऐसी ही कुछ बात

† देखिए रोहतासमठ दूसरा भाग, पहिला बयान ।

कही थी ।

भैयाराजा० । सो क्या ? वे कब आपसे मिले थे और कहाँ ?

दामो० । बहुत दिन हुए इसी जगह तिलिस्म में आकर उन्होंने मुझसे भेंट की थी और उस समय उनके साथ प्रभाकरसिंह भी थे* । उनकी उस समय की बातों का जो कुछ आशय मैंने समझा उससे तो मुझे यही विश्वास हुआ था कि यद्यपि तिलिस्म टूटे बिना अब मैं स्वतन्त्रता की हवा नहीं खा सकता पर यह भी गुमान हुआ था कि तिलिस्म जल्द ही टूटने वाला है—और यद्यपि उन्होंने ऐसा कहा तो नहीं पर मुझे यही भास हुआ कि कदाचित् प्रभाकरसिंह ही उसे तोड़ेंगे, पर वैसा कुछ तो हुआ नहीं और उस समय के पीछे आज बरसों बाद कुँअर साहब की शकल देखने में आई है ।

गोपाल० । प्रभाकरसिंह ने लोहगढ़ी का तिलिस्म तोड़ा और उसमें के बहुत से कैदियों को छुड़ाया भी पर उनमें आपको न पा हमें बहुत निराशा हुई ।

भैया० । (चौंक कर) अच्छा—कौन कौन उसमें से निकला ?

गोपाल० । कुछ औरों के इलावे श्यामलाल, कामेश्वर, अहिल्या और भुवनमोहिनी भी ।

भैया० । हैं, ये लोग लोहगढ़ी में से जीते जागते निकले ?

गोपाल० । जी हाँ ।

भैया० । जरूर दारोगा ही की करतूतों ने इनको भी कैद किया होगा !

गोपाल० । जी हाँ यही बात थी ।

भैया० । मगर इनके....

पुजारी० । (बात काट कर) शंकर, तुम गलती कर रहे हो ! गोपाल को अभी इस समय यहाँ ज्यादा देर तक रोकना मुनासिब नहीं, अभी तिलिस्म का चौथा दर्जा टूटना बाकी है और जब तक यह टूट नहीं लेता हम लोग खतरे से खाली नहीं हैं । इनसे तो हमारी अब बराबर ही बातें होती रहेंगी, इस समय फिक्र हमें उनकी करनी है जो एकदम बेबस पड़े हैं । तुम अब इनको काम करने के लिए जाने दो ।

भैया० । आप बहुत ठीक कह रहे हैं पुजारीजी, अच्छा बेटा गोपाल, एक बार फिर मेरी छाती से लग जाओ तब चौथा दर्जा तोड़ने के काम में हाथ लगा दो । जब तक वहाँ का काम पूरा कर वहाँ बन्द लोगों को छुड़ा न लोगे हम

* देखिये भूतनाथ बारहवाँ भाग, नौवाँ बयान ।

लोग व्यग्रतापूर्वक तुम्हारी राह देखते यहीं रुके रहेंगे ।

गोपाल० । बस एक बात मुझे और पूछ लेने दीजिए । जब इन्द्रदेव यहाँ आकर (दामोदरसिंह को बता के) इनसे मिल गए तो जरूर आप लोगों से भी भेंट हुई होगी, बड़े आश्चर्य की बात है कि उन्होंने इस मुलाकात का जरा भी जिक्र मुझसे नहीं किया !

भैयाराजा० । नहीं हम लोगों से भेंट ही कहाँ हुई उनकी ! उस समय केवल ये ही इस जगह थे और हम लोग सब कोई अलग अलग और दूसरी दूसरी जगहों में अपने मुसीबत के दिन काट रहे थे । वह तो जब लोहगढ़ी का तिलिस्म टूट गया और कई रास्ते खुल गए तब पुजारीजी की कारीगरी कुछ काम आई और हम चारों आदमी एक जगह हो सके ताकि कम से कम बातचीत करके अपना मन तो बहलाए रख सकें ।

गोपाल० । मगर फिर भी....

यकायक कहीं से एक बड़े जोर की आवाज कुछ कुछ इस तरह की आई जैसे तोप छूटी हो । दूर आसमान पर धूएँ का एक गुब्बार उठता हुआ नजर आया जिसे देख कर और लोग तो ताज्जुब में पड़ गए मगर पुजारीजी बोल उठे, "गोपाल, अब तुम एक पल का भी विलम्ब मत करो और आगे की कारंवाई के लिए चल पड़ो नहीं बहुत बड़ी झंझट आ जायगी । यह आवाज तुम्हें ही सावधान करने के लिए है । अब जरा सा भी विलम्ब घातक होगा ।"

गोपालसिंह यह सुनते ही भैयाराजा के पैरों पर गिर पड़े जिन्होंने उनको छाती से लगा लिया । इसके बाद उन्होंने बहूरानी और पुजारीजी के चरण छूए और दामोदरसिंह को भी प्रणाम किया । सभी ने उनको आशीर्वाद दिया और पुजारीजी उनके सिर पर हाथ रख कर बोले, "आओ बेटा, चौथा दर्जा तोड़ के यहाँ लौटो तो सब लोग साथ ही तिलिस्म के बाहर होंगे, जब तक तुम वापस नहीं आते हम लोग यहीं रहेंगे ।"

गोपालसिंह ने पुनः सभी को प्रणाम किया और तब घूम कर अपनी तिलिस्मी चिड़िया के पास पहुँचे । उसके पैरों के साथ कुछ कर वे उसकी पीठ पर जम कर बैठ गये और अपने दोनों पैरों को उसके गले के नीचे ले जाकर आपुस में खूब कस कर फँसा लिया । हाथ से उसकी गर्दन को मजबूत पकड़ जैसे ही दूसरा हाथ उसकी दुम के पास ले जाकर उन्होंने वहाँ कुछ किया, वह चिड़िया कुछ अजब ढंग से जरा सा उछली, और तब उचकती और दौड़ती हुई आगे की

तरफ बढ़ो, मगर यह कुछ ही देर के लिए था। जैसे ही उसकी चाल में तेजी आई उसने अपने दोनों डहने खोल दिए और एक अजीब अदा के साथ उन्हें इस प्रकार हिलाने और चलाने लगी जिस प्रकार कोई सचमुच की चिड़िया उड़ना आरम्भ करते समय अपने पंख चलाती है।

उन्हें इस बात का पता भी न लगा कि कब उस चिड़िया के पैरों ने जमीन छोड़ दी और वे पंख उन्हें लेकर हवा में उड़ने लगे। यह बात तो उन्हें तब मालूम हुई जब उसकी पीठ पर अच्छी तरह जम कर बैठ जाने के बाद उन्होंने चाचा इत्यादि को आखिरी बिदा कहने के लिए पीछे घूम कर देखा और उन्हें अपने से बहुत पीछे दूर और नीचे खड़े हाथ हिलाते पाया। अचानक गोपालसिंह के मुँह से निकल गया, "हैं, क्या मैं हवा में उड़ रहा हूँ!"

चौथा बयान

एक दफे गोपालसिंह का कलेजा जोर से धड़क उठा मगर दूसरे ही क्षण तिलिस्म बनाने वालों की कारीगरी का विश्वास कर उन्होंने अपने को शान्त किया और जम कर बैठ गए। कुछ ही समय के बाद जब वे स्थिर हुए तो उन्होंने देखा कि उस चिड़िया की गति बड़ी ही स्थिर दृढ़ और विश्वस्त है। वह न तो हिलती है, न अपने मार्ग से जरा भी विचलित ही होती है और मजबूत सर्राटे मारती हुई उन्हें सीधा आगे और ऊपर की तरफ लेती जा रही है। यह देख वे और भी शान्त हुए और सब तरह का भय दूर करके धीमी आवाज में बोले, "तिलिस्मी किताबों में पढ़ा था कि तीसरा दर्जा तोड़ने पर तुमको इच्छानुसार गति वाला एक विमान प्राप्त होगा। जरूर यही वह विमान है पर अब देखना चाहिए कि इसकी गति मेरे इच्छानुसार है या तिलिस्मी आवश्यकतानुसार?"

गोपालसिंह ने अपने दोनों हाथों से उस चिड़िया की गर्दन जोर से पकड़ी और उसके मुँह अर्थात् चोंच को एक तरफ को मोड़ा। आश्चर्य की बात थी कि साथ ही वह चिड़िया भी घूमी और उसी तरफ को उड़ने लगी। उन्होंने चोंच को थोड़ा दबाया, चिड़िया नीचे की तरफ झुकी, चोंच ऊपर उठाने से चिड़िया ऊपर को उठी। दुम की तरफ हाथ करते ही चिड़िया का आगे बढ़ना रुक गया यद्यपि इस समय भी उसके पंख धीरे धीरे चल रहे थे। पुनः कुछ किया और वह तेजी से आगे को बढ़ी। गोपालसिंह के मुँह से निकला, "धन्य हैं

वे लोग जो ऐसी चीजें बना गए! क्या अब भी कोई कह सकता है कि हमारे शास्त्रों में जिन अस्त्र शस्त्रों और विमानों का जिक्र आया है वे कोरी गप थे! चीजें सब हैं, केवल उनके जानकार लुप्त हो गये हैं। मगर खैर अब मुझे जल्दी आगे की कार्रवाई समाप्त कर चाचाजी के पास लौट चलना चाहिये!"

गोपालसिंह ने गर्दन घुमाई और अपने चारो तरफ देखा। उन्हें मालूम हुआ कि वे जमीन से बहुत ऊँचे उठ आये हैं और इस समय उनके नीचे उस कोसों फैले हुए तिलिस्म का पूरा नक्शा फैला हुआ है। एक ऊँची इमारत की तरफ उँगली उठा कर उन्होंने कहा, "वायुमण्डप है जहाँ से मैं मोर की पीठ पर बैठ कर उड़ा था। वह ऊपर वाले गुम्बद में जरा सी चीज जान पड़ता है वही मोर है, पर आश्चर्य है कि वह पुनः लौट कैसे आया! अहा, यह तो वही फुहारों वाला बाग है, बीच की संगमर्मर वाली बारहदरी कैसी सुन्दर जान पड़ती है मानों किसी गुड़िया का महल हो। जरूर वह गंगा के किनारे मेरा खासबाग और महल होगा, मगर जिस तरह मैं यहाँ से उसे देख रहा हूँ क्या वहाँ वाले मुझको देख न रहे होंगे?"

एक पल के लिए गोपालसिंह के ध्यान में सुन्दर दारोगा और उनके दूसरे दुश्मन दौड़ गए और उनके मन में उन सभों ही से बुरा बदला लेने का खयाल चक्कर मार गया जिन्होंने उनकी जिन्दगी के सबसे सुनहले दिन बर्बाद कर दिए थे, पर उन्होंने अपने कर्तव्य का खयाल किया और अपने मन को रोक ठीक नीचे की तरफ निगाह की, साथ ही चौंक कर बोल उठे, "मगर यह क्या? मेरे इस अद्भुत विमान की छाया जमीन पर क्यों नहीं पड़ रही है? सूर्य तो पूरी तेजी से चमक रहे हैं और चिड़िया कोई ऐसी बहुत छोटी भी नहीं है! तब छाया क्यों नहीं दिखाई पड़ती? क्या ऐसा तो नहीं है कि किसी तिलिस्मी कारीगरी की बदौलत यह जमीन से अलोप हो और मुझ पर किसी की भी दृष्टि न पड़ रही हो!!"

गोपालसिंह ने बहुत गौर किया पर उनकी समझ में कुछ न आया और लाचार हो कर उन्होंने अपना ध्यान दूसरी तरफ लगाया। उस चिड़िया की गर्दन को इच्छानुसार मोड़ते और घुमाते हुए वे पहिले की बनिस्बत उसे जमीन के बहुत पास उतार लाये और तब एक तरफ को उंगली उठा कर बोले, "यही वह ऊँची बारहदरी है जिसमें लाशें लटकी रहा करती है, मुझे उसी पर चलना चाहिए।"

जरा ही देर बाद गोपालसिंह के इच्छानुसार उड़ती हुई वह चिड़िया उस ऊँची बारहदरी के पास जा पहुँची जिसका हाल हम पीछे कई जगह लिख आये हैं या

जहां पहुँच भूतनाथ ने वह डरावना तमाशा देखा था* । उड़ते ही उड़ते उस बारहदरी के अन्दर तक चले जाना उस चिड़िया के विशाल पंखों की बदौलत कठिन था पर गोपालसिंह सहज ही में उसे बारहदरी के बारामदे तक ले गये और वहाँ पर उसे रोक उसकी पीठ पर बैठे ही बैठे बारहदरी की कैफियत देखने लगे।

इस बहुत बड़ी बारहदरी के हर तरफ बारह दरें थीं और इनमें पूरब वाली दरों के साथ बारह पुतले जिनके गले में सीकड़ बँधे हुए थे फाँसी लगे आदमियों की तरह झूल रहे थे। इधर के अलावे बाकी तीनों तरफ की दरें खाली थीं। गोपालसिंह ने अपनी तिलिस्मी तलवार निकाल ली और एक पुतले के दाहिने पैर के अंगूठे से लगा दी। छुलाते ही वह मूरत हिली और तब उसी सिक्कड़ के सहारे ऊपर उठ कर छत की तरफ कहीं गायब हो गई। गोपालसिंह ने दूसरी मूरत के अंगूठे से तलवार लगाई और वह भी उसी तरह गायब हो गई। पारी पारी से उन बारहों मूरतों को गोपालसिंह ने हटा दिया और अब वह बारहदरी एक दम खाली हो गई। बारहवीं मूरत के हटते ही एक आवाज और धूएँ का एक बड़ा सा गोला बारहदरी की छत से उठ कर आसमान की तरफ गया पर गोपालसिंह ने उस तरफ कुछ ध्यान न दिया और आगे की कारवाई करने लगे। उन्होंने उस चिड़िया को कुछ ऊँचे उठाया और उचक कर गौर से देखा। उस बारहदरी के चिकने फर्श पर उन्हें कुछ लकीरें सी खिंची हुई दिखाई पड़ीं जिनको वे बहुत गौर से देखने लगे और तब एक स्थान पर अपनी आँखें गड़ा कर अपनी तिलिस्मी तलवार के साथ कुछ किया। वह लम्बी होने लगी और देखते ही देखते इतनी बढ़ गई कि गोपालसिंह ने सहज ही अपनी जगह पर बैठे ही बैठे उस स्थान को उसकी नोक से छू दिया जिस पर अपनी निगाहें गड़ा रक्खी थीं।

तलवार का छूना था कि एक पटाखे की सी आवाज हुई और उस जगह की जमीन फट गई। उसके अन्दर से कुछ देर तक तरह तरह की आवाजें आती रहीं और तब एक सुन्दर पुतली निकल कर सामने आई जो ठीक वैसी ही थी जिस तरह वाली एक पुतली के साथ कुछ समय पहले गोपालसिंह शतरंज खेल चुके थे। उस पुतली ने गोपालसिंह के सामने आ अदब के साथ सलाम किया और हाथ जोड़ कर पूछा, "महाराज की क्या आज्ञा है ?" गोपालसिंह ने एक निगाह उसे नीचे से ऊपर तक देखा और तब कहा, "एक सुनहरी पेटी तुम्हारे पास है जो मेरी मिलकियत है, वह तुम मुझे ला दो।" पुतली ने हाथ जोड़ कर कहा, "मगर महा-

* देखिए भूतनाथ दसवाँ भाग, चौथा बयान।

राज, जिस जगह वह रक्खी हुई है वहाँ की ताली तो मेरे पास नहीं है ?" गोपालसिंह ने वही तिलिस्मी ताली निकाल कर उसके सामने की और कहा, "यह लो।"

झुक कर बड़े अदब के साथ उस पुतली ने वह ताली गोपालसिंह के हाथ से ले ली और पीछे को हटती हुई उसी गड्ढे के पास जा उसके अन्दर उतर गई। कुछ उद्वेग के साथ गोपालसिंह राह देखने लगे कि अब क्या होता है क्योंकि पुजारी जी की बातों ने उनके मन में उस ताली के बारे में एक सन्देह की सृष्टि कर दी थी और वे सोच रहे थे कि देखें ताली काम करती है कि नहीं।

मगर गोपालसिंह का सन्देह व्यर्थ था और कुछ ही देर बाद वह पुतली सोने की बनी हुई एक छोटी सन्दूकड़ी लिए हुए उस गड्ढे के बाहर निकली। गोपालसिंह के सामने आ उसने अदब से कहा, "इसी चीज से महाराज का अभिप्राय है ?" गोपालसिंह खुश हो कर बोले, "हाँ यही" और तब हाथ बढ़ा वह पेटी और अपनी ताली उस पुतली के हाथ से ले ली। एक बार खूब अच्छी तरह उलट पुलट कर उस पेटी को देखा और तब अपने सामने रखते हुए धीरे से बोले, "पुजारीजी का सन्देह वृथा था और जरूर बूआजी ने मुझको वही ताली दी है जिसकी अब मुझे जरूरत पड़ेगी।" ताली को जेब के हवाले कर उन्होंने अपने वाहन पक्षिराज के साथ कुछ किया और साथ ही वह ऊँची बारहदरी के पास से हटा। गोपालसिंह ने उस पुतली की तरफ निगाह फेरी पर न तो वही कहीं नजर आई और न बारहदरी के फर्श में वह दरार ही दिखाई पड़ी जिसके अन्दर से वह निकली थी।

गोपालसिंह ने अपने चारो तरफ गौर के साथ देखा और एक एक करके उंगली उठाते हुए कहने लगे—"वह वायु-मण्डप, वह घूमने वाली बारहदरी, वह शेरों वाला कमरा, वह बुर्ज, वह रत्न-मण्डप और वह मणि-भवन है। वह लम्बी फैली हुई इमारत जान पड़ता है इन्द्र-मण्डप है और जरूर वह ऊँचा कमरा शीशमहल का होगा, मेरे नीचे यह आनन्दबाग है। यह सब कुछ तो है पर 'सूर्य' और 'मुकुट' नामक स्थान कहाँ हैं जहाँ अब मुझे पहुँचना चाहिए ?" गोपालसिंह ने गौर की निगाह से सब तरफ देखना शुरू किया और उनके इच्छानुसार उनका वह विचित्र विमान उनको लिए हुए इधर से उधर उड़ने लगा।

एक समूचा चक्कर उन्होंने उस कोसों तक फैले हुए तिलिस्म का लगाया पर उनकी इच्छा पूर्ण न हुई। कोई भी स्थान उनको ऐसा नजर न आया जिसे वे अपना गन्तव्य समझते। कोई 'सूर्य' अथवा 'मुकुट' की तरह की जगह उन्हें दिखाई न पड़ी और लाचार वे सोचने लगे, "आखिर वे जगहें हैं कहाँ जहाँ अब मुझे पहुँ-

चना चाहिए ?"

गोपालसिंह का ध्यान उस सुनहरी पेटी पर गया जो उस पुतली ने लाकर उन्हें दी थी और उनके मन में यह खयाल हुआ कि शायद वह इस रहस्य को खोल सके। उन्होंने उसे खोलना चाहा पर वह ऐसी मजबूत बन्द थी कि किसी तरह खुली नहीं। उन्होंने कहा, "बिना कहीं स्थिर होकर बैठे यह काम न होगा। कहीं उतरना चाहिए। वह आनन्दबाग ही इसके लिए सब तरह से ठीक होगा क्योंकि वह इस तिलिस्म के केन्द्र में पड़ता है।"

इसके कुछ ही देर बाद मन्थर गति से उड़ती हुई वह चिड़िया गोपालसिंह को लिए उस संगमर्मर वाली बारहदरी के ऊपर पहुँची और तब बहुत ही हलके से छत पर जम कर बैठ गई। गोपालसिंह उसकी पीठ पर से उतर पड़े और उसके पैरों के पास कुछ करने के बाद बोले, "अच्छा पक्षिराज, अब तुम कुछ समय तक यहीं विश्राम करो जब तक कि मैं आगे का कर्तव्य निश्चित नहीं कर लेता।" एक कोने में बनी हुई पतली सीढ़ियों की राह गोपालसिंह उस छत के नीचे उतर गए और बारहदरी की सीढ़ियों पर बैठ उस पेटी को खोलने की चेष्टा करने लगे।

अजीब तरह की वह सन्दूकची थी। न तो उसमें कोई कब्जा था न कुन्डा, न कहीं ताली लगाने की जगह थी न खोलने की, और तो और कहीं एक दरार भी ऐसी नजर न आती थी जो यह बताती हो कि इस जगह से वह खुलती होगी। गोपालसिंह बहुत देर तक उसे घुमा फिरा कर देखते ठोंकते पीटते और जगह जगह से दबाते झुकाते रहे पर वह तो कहीं से खुलने का नाम ही न लेती थी। आखिर उन्होंने कहा, 'कम्बख्त कहीं से खुलेगी भी कि नहीं।" पुनः वे उसे देखने लगे, मगर सब बेकार, वह न तो खुली और न उसको खोलने की कोई तर्कीब ही जान पड़ी।

झुँझला कर गोपालसिंह ने पेटी उठा कर दूर फेंक दी और कहा, "कम्बख्त खुलने के लिए बनी ही नहीं है!" मगर आश्चर्य की बात थी कि जमीन पर गिरने के साथ ही उस पेटी का ऊपरी हिस्सा कमल के पत्तों की तरह कई खण्डों में खुल गया और उसके अन्दर से एक ताम्रपत्र निकल कर बाहर गिर पड़ा। गोपालसिंह के मुँह से हँसी निकली और वे अपनी जगह से उठते हुए बोले, "क्या ही मजाक करते हैं ये तिलिस्म बनाने वाले भी! सीधे से सहज में खुल जाती तो क्या कोई हर्ज था?" आगे बढ़ कर उन्होंने वह ताम्रपत्र उठा लिया और पुनः अपनी जगह पर बैठ गौर से देखने लगे। बहुत ही महीन अक्षरों में उस पर कुछ लिखा हुआ

था। वे बड़े गौर से उस मजमून को पढ़ने लगे, मजमून यह था :—

"तिलिस्म के तीन दर्जे तोड़ लेने पर हम तुमको बधाई देते हैं, परन्तु अब आगे का काम करने में बहुत ज्यादा सावधानी की जरूरत है और जब तक यहीं की असली ताली तुम्हारे पास न होगी तुम चौथा दर्जा तोड़ने का काम पूरा न कर सकोगे क्योंकि अगर तुमने सब कार्य ठीक ठीक किया है तो जरूर तुम्हारी दोनों तिलिस्मी किताबें खर्च हो चुकी होंगी और अब केवल यह ताली ही आगे का काम करेगी।"

"यहाँ से तुम सीधे 'मुकुट' तक चले जाओ और चौथे दर्जे का तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगा दो जिसकी तर्कीब इस ताम्रपत्र के पीछे लिखी हुई है। अगर कभी कहीं अण्डस पड़े तो तुमको मणि-भवन जाना चाहिए जहाँ महाराज सूर्यकान्त के दर्बारी ज्योतिषी आचार्य रघुनाथ शायद तुम्हारा सहायता कर सकें!"

गोपालसिंह ने धीरे से कहा, "तिलिस्मी ताली मेरे पास है, मेरे काम में कोई अण्डस न होनी चाहिए।" और तब उस ताम्रपत्र की पीठ पर का मजमून पढ़ने लगे। इधर के अक्षर और भी बारीक थे और मजमून भी काफी लम्बा था फिर भी चेष्टा कर गोपालसिंह उसको एक या दो ही नहीं बल्कि कई बार पढ़ गये और जब उसकी बातें दिल में अच्छी तरह नक्श हो गईं तो भगवान का नाम लेकर उठ खड़े हुए। जिस पेटी में वह ताम्रपत्र रक्खा हुआ था उसे उन्होंने उठा लिया और उसके अन्दर की तरफ देखा। किसी जगह का नक्शा वहाँ बना हुआ था जिसे वे बहुत देर तक गौर से देखते रहे और तब सिर हिला कर बोले, "ठीक है, मैं सब कुछ समझ गया। यह चौथा दर्जा तोड़ना तो बाकी के सभी दर्जों से सहज काम है!"

गोपालसिंह ने वह ताम्रपत्र उसी डिब्बे के अन्दर रख दिया और तब उसके उन चारों हिस्सों को मिला कर दबाया जो डिब्बा फेंकने से कमल के पत्तों की तरह खुल कर चार तरफ को हो गये थे। खटके की सी आवाज आई और वे चारों हिस्से आपुस में जुड़ कर ऐसे हो गये कि कहीं दरार न रह गई और वह डिब्बा फिर पहिले की तरह हो गया जिसे उलट पुलट कर देखने पर गोपालसिंह के मुँह से बरबस निकल गया, "वाह, क्या कारीगरी है, कहीं दरार तक नजर नहीं आती जो बताये कि यह कहाँ से खुलता है!"

डिब्बा हाथ में लिए गोपालसिंह अपनी जगह से उठे और सीढ़ियाँ चढ़ बारहदरी के अन्दर पहुँचे। उस डिब्बे को तो उन्होंने एक तरफ बने हुए ताक पर

सावधानी के साथ रख दिया और तब वहाँ की जमीन में किसी निशान को खोजते हुए इधर से उधर घूमने लगे। उस बारहदरी का फर्श काले और सुफेद संगमर्मर के टुकड़ों का बहुत ही साफ और चिकना बना हुआ था और उसमें जगह जगह दूसरे रंगीन पत्थरों की पच्चीकारी का तरह तरह का काम बना हुआ था। देखते देखते एक जगह पहुँच कर गोपालसिंह रुक गये और गौर से देख कर बोले—

"यही जगह मालूम होती है।"

हमारे जो पाठक हमारे साथ पहिले इस जगह आ चुके हैं उनको इस बारहदरी की कैफियत जरूर मालूम होगी और उन्हें यह भी याद होगा कि ऊँची जगत की इस बारहदरी के बीचोबीच में तीन चार हाथ का कुण्ड था और उसके चारों तरफ संगमर्मर की चार छोटी छोटी चौकियाँ बनी हुई थीं*। यह कुण्ड इस समय सब तरफ से खाली था मगर रंग ढंग से मालूम होता था कि जरूर किसी समय इसमें पानी भरा रहता होगा। इस कुण्ड के चारों तरफ चार कमल के फूल पच्चीकारी के काम के बने हुए थे जिनमें से एक के पास गोपालसिंह इस समय खड़े थे। कुछ सोच कर गोपालसिंह ने अपना पैर उस फूल पर रक्खा और जोर से दबाया। वह कुछ धँस सा गया और साथ ही एक तरफ वाली संगमर्मर की चौकी का ऊपरी पत्थर अपनी जगह से उठ कर खड़ा हो गया। इस पत्थर के दूसरी तरफ जो पीछे की तरफ पड़ने के कारण अभी तक निगाहों की ओट में थी गोपालसिंह को ताली लगाने का एक छोटा सूराख नजर आया। उन्होंने अपनी तिलिस्मी ताली इस सूराख में डाली और किसी खास तर्कीब से घुमाया। वह सहज ही में घूम गई और साथ ही उस कुण्ड की तली वाला पत्थर अपनी जगह से हट कर बहुत नीचे चला गया तथा उस जगह एक रास्ता नजर आने लगा जिसके अन्दर से किसी तरह की हलकी आवाज आ रही थी। अपना सामान सम्हाल गोपालसिंह इसी रास्ते में उतर गये और उसके भीतर जाने के साथ ही कुण्ड की तली वाला पत्थर अपने ठिकाने पर आकर बैठ गया। उस चौकी का संगमर्मर वाला ऊपरी पत्थर भी पुनः पहिले की तरह अपने ठिकाने पर जम गया।

पतली चिकनी सीढ़ियों पर गोपालसिंह का पैर पड़ा और वे बेखटके नीचे उतरते चले गये। वह आवाज जो पहले उन्हें सुनाई दी थी धीरे धीरे स्पष्ट होने लगी और जब आखिरी सीढ़ी पर उतर गोपालसिंह ने एक छोटी सुरंग पार कर एक कमरे में प्रवेश किया तो और भी साफ हो गई। इस कमरे में एक दम अन्ध-

* देखिए भूतनाथ सत्रहवाँ भाग, छठवाँ बयान।

कार था जिसे अपनी तिलिस्मी तलवार की मदद से दूर करने पर गोपालसिंह ने देखा कि उनके ठीक सामने ही एक छोटा चबूतरा है जिस पर एक पुतली बनी हुई है जो न जाने किस कारण से अपनी जगह पर धीरे धीरे घूम रही है और उसके पैरों के नीचे वाले चबूतरे में से ही वह आवाज निकल रही है जो जरूर किसी कल पुरजे के चलने की होगी। दो तीन चक्कर गोपालसिंह ने इस पुतली के चारो तरफ लगाये और तब एक जगह पर रुक कर गौर से देखने लगे। एक छोटा पटकोण यन्त्र चबूतरे की दीवार पर बना हुआ नजर पड़ा जिस पर वह ताली रख कर दबाते ही ताली भीतर घुस गई। गोपालसिंह ने कई दफे घुमा कर ताली निकाल ली और देखा कि वह पुतली पहिले की बनिस्बत तेजी से घूमने लगी है। उन्होंने मन ही मन कहा, "मेरा सन्देह वृथा है, जरूर यह ताली ही असली ताली है और आगे के भी सब काम पूरे करेगी।"

धीरे धीरे पुतली के नाचने की तेजी बढ़ती गई और अब उसके साथ साथ वह चबूतरा भी घूमने लगा। यह गोपालसिंह की आँखों का भ्रम था या क्या वह कमरा भी उस पुतली ही की तरह घूमने लगा था? उसकी दीवारें उन्हें घूमती हुई सी जान पड़ीं। कुछ ही देर बाद गोपालसिंह के सिर में चक्कर आने लगा और वे मजबूर हो अपना सिर दोनों हाथों से पकड़ उसी जगह फर्श पर बैठ गये। धीरे धीरे वे एक दम बदहवास हो गये और उन्हें तनोबदन की सुध न रह गई।

जिस समय गोपालसिंह के होश लौटे उन्होंने अपने को एक अजीब ही जगह में पाया जिसे आज से पहिले कभी देखा न था, यहाँ तक कि अपने अद्भुत 'पक्षिराज' पर से भी जिसके देखने का मौका न मिला था।

एक बहुत ही बड़ा गोल कमरा जिसका पेटा किसी तरह पर चालीस हाथ से कम न होगा उनके सामने था जिसमें एक तरफ पत्थर की चौकी पर वे पड़े हुए थे। कमरे की छत जो अन्दाज से कहीं ज्यादा ऊँची थी गोलाम्बरनुमा बनी हुई तथा शीशे की थी और उसके चारो तरफ से आठ महराब उठ कर छत के बीचोबीच में जा कर एक जगह मिल जाते थे। छत के शीशे एक ही रंग के न थे बल्कि तरह तरह के और कुछ इस ढंग से बैठाए हुए थे कि अपनी गोलाई और उन आठों गोलाम्बरों की बदौलत बहुत ही बड़े एक मुकुट में जड़े रत्नों की याद दिलाते थे और इसका खयाल आते ही गोपालसिंह के मुँह से निकल गया—"क्या यही तो वह स्थान नहीं है जिसका तिलिस्मी किताबों में 'मुकुट' नाम दिया हुआ है?" वे सम्हल कर बैठ गये और अपने चारो तरफ बड़े गौर से देखने लगे।

कमरे के चारो तरफ आठ बड़े बड़े दर्वाजे थे और उनके बीच बीच में आठ ही खिड़कियाँ भी बनी हुई थीं। इस समय ये सभी दर्वाजे और खिड़कियाँ बन्द थीं और यहाँ जो कुछ रोशनी थी वह उस ऊपर वाली रंगीन गोल शीशे की छत से ही आ रही थी। जान पड़ता था कि इस समय सूर्यदेव इस छत के ठीक ऊपर की तरफ और पूरी तेजी से चमक रहे थे क्योंकि कमरे की जमीन पर रंगीन शीशों को पार करके आती हुई और धूप के कारण बनने वाली तरह तरह की रंग बिरंगी रोशनी एक अजीब खुशनुमा दृश्य बना रही थीं। गोपालसिंह देर तक उसकी शोभा देखते रहे इसके बाद अपनी जगह से उठे और कमरे में इधर से उधर घूमने लगे। एक बार कमरे के समूचे फर्श और उस पर पड़ने वाली रंगीन आभा को वे बहुत गौर से देख गये और तब दीवारों के साथ चलते हुए दर्वाजों और खिड़कियों को देखने लगे। एक जगह की दीवार में उन्हें संगमर्मर का पत्थर जड़ा नजर आया जिस पर कुछ खुदा देख वे रुक गये और पढ़ने लगे, यह लिखा था :—

"अगर तुम्हारा नाम गोपालसिंह है तो इस कमरे का चारो तरफ का सब सामान तुम्हारे ही लिए है।"

इसके नीचे महीन अक्षरों में और भी कुछ लिखा हुआ था, गोपालसिंह बहुत गौर के साथ उसे भी पढ़ गये और तब खुश होकर बोले, "एक बार देख कर आगे चलूँगा!" बगल वाले बन्द दर्वाजे को कुछ देर तक वे बहुत गौर से देखते रहे, इसके बाद एक जगह अपनी ताली रख कर दबाया और घुमाया। हलकी आवाज करता हुआ दर्वाजा खुल गया और गोपालसिंह उसके अन्दर चले गये।

काफी देर के बाद जब गोपालसिंह दर्वाजे के बाहर निकले तो उनके चेहरे पर गम्भीर आश्चर्य का भाव था। बरबस उनके मुँह से निकल गया—"इतनी दौलत किसी एक आदमी के पास हो, देख के भी विश्वास नहीं होता!" कुछ रुक उन्होंने एक दूसरा दर्वाजा खोला और उसके अन्दर घुसे।

जब इस दर्वाजे के बाहर गोपालसिंह निकले तो उनके चेहरे पर का आश्चर्य का भाव और भी बढ़ा हुआ था। रुकते गले से उन्होंने कहा, 'क्या ऐसी चीजें भी इस संसार में होना सम्भव है!" कुछ देर तक वे तिलिस्म और उसके बनाने वालों की तारीफ करते रहे, इसके बाद एक तीसरे दर्वाजे की तरफ बढ़े मगर उनके मुँह से निकला, "लेकिन यह बात मेरी समझ में न आई कि जब ये चीजें मेरे ही लिए बल्कि मेरी ही हैं तो मैं इनको इस्तेमाल क्यों नहीं कर सकता!"

तीसरे दर्वाजे के अन्दर गोपालसिंह को बहुत ज्यादा देर लगी और जब वे उसके बाहर आये तो यद्यपि प्रसन्न थे पर चिन्ता के लक्षण भी स्पष्ट थे। वे एक जगह खड़े हो गये और सिर झुकाये गम्भीर भाव से कहने लगे—"जरूर इसमें कुछ भेद है।" थोड़ी देर खड़े न जाने क्या सोचने के बाद वे उसी पत्थर की चौकी के पास चले गये और उसके ऊपर बैठ गाल पर हाथ रख तरह तरह की चिन्ता करने लगे।

न जाने किस तरह की बातें गोपालसिंह के दिमाग के अन्दर इस समय घूम रही थीं कि जिन्होंने उन्हें व्याकुल कर दिया था। इस पत्थर पर भी वे ज्यादे देर तक बैठ न सके, कुछ देर बाद वे उठे और एक खिड़की के पास गये। उसी ताली से उन्होंने वह खिड़की खोली, काठ का पल्ला हटाने बाद लोहे की महीन जाली का पल्ला नजर आया और उसको भी हटाया तो लोहे के मोटे छड़ों का जंगला दिखाई पड़ा जिसके दूसरी तरफ एक अजीब दृश्य था।

एक लम्बी पतली सुरंग जो अवश्य ही उस खिड़की से ऊँचाई और चौड़ाई में बड़ी होगी मगर जिसका अन्त काफी दूर जाकर होता था और इसी कारण जिसका दूसरा सिरा इस जगह से किसी चोंगे की भाँति नजर पड़ता था इस समय गोपालसिंह की आंखों के सामने थी। सुरंग का वह मुहाना खुला हुआ था और उसकी राह बाहर दिखाई पड़ने वाले बाग मैदान और जंगल का दूर तक फैला हुआ दृश्य नजर आ रहा था जिस पर अस्त होते हुए सूर्य की किरणें पड़ रही थीं। अन्दाज से गोपालसिंह को मालूम हुआ कि अब सूर्यनारायण के अस्त होने में अधिक विलम्ब नहीं है, मगर जब अपने पीछे कमरे में निगाह की तो फर्श पर पड़ने वाली रंगीन चमकों को ज्यों का त्यों पाया अस्तु समझना पड़ा कि कमरे की गोल छत के ऊपर से आने वाली रोशनी सूर्य की नहीं बल्कि किसी और ही तरह की है। फिर खिड़की की तरफ निगाह की और सुरंग के बाहर वाला वह दृश्य देखने लगे जो यहाँ से दिखाई पड़ रहा था। इस सुरंग की दीवारों पर जब गौर किया तो मालूम हुआ कि उस पर दोनों तरफ तरह तरह की तस्वीरें बनी हुई हैं पर छड़ों की तरफ से भीतर जाने वाली या उधर उस दूसरे सिरे से आने वाली रोशनी इतनी ज्यादा न थी कि उन तस्वीरों को पूरी कैफियत दिखा सके अस्तु लाचार वे पुनः बाहर वाले मैदान की तरफ देखने लगे और साथ ही चौंक पड़े। दूर मैदान में एक पेड़ के नीचे बैठी एक सूरत उन्हें दिखाई पड़ी जिसे देखते ही वे चमक गए और उनके मुँह से निकल गया—"हैं, वह कौन? क्या....?" और गौर से देखा तो पास ही जमीन

पर किसी को पड़े हुए पाया जिसका सिर इस बैठे हुए व्यक्ति की गोद में था। यकायक उछल पड़े और बोले, "हैं, क्या मैं....!"

गोपालसिंह अपने को रोक न सके और उस मैदान में जाने की तर्कीब सोचने लगे। खिड़की के छड़ों पर निगाह की तो मालूम हुआ कि यह छड़ों वाला पल्ला खुल सकता है, बल्कि एक जगह उसमें ऐसा सूराख नजर आया जो ताली जाने योग्य था पर अपनी तिलिस्मी ताली जब उसमें डाली तो वह न तो घूमी और न पल्ला ही खुला। घबड़ा कर जोर से छड़ों को पकड़ के हिलाया पर वे टस से मस न हुए। जोर की आवाज दी मगर वह उस लम्बी सुरंग को पार कर दूर मैदान के उन दोनों आदमियों तक पहुँचने में समर्थ न हुई। एक दम घबड़ा गए और पागलों की तरह माथे पर हाथ रख कर बोले. "हाय, क्या यहाँ से वहाँ जाने का कोई रास्ता ही नहीं है!"

दौड़े दौड़े गोपालसिंह एक दूसरी खिड़की के पास गए और उसका पल्ला खोला। इधर भी उसी तरह की सुरंग और उसके सिरे पर एक खुशनुमा बाग का दृश्य नजर आया मगर रंग ढंग से जान पड़ा कि यह कोई बिल्कुल दूसरी ही जगह है। पलट कर पुनः उस पहिली खिड़की के पास पहुँचे पर अब वे दोनों सूरतें अपनी पहली जगह पर न थीं। खूब गौर से देखा तो उनकी एक झलक दूर पर पेड़ के पीछे नजर आई पर तुरन्त ही गायब हो गई। घबड़ा कर दोनों हाथों से अपना माथा पीट लिया और भरे हुए गले से बोले, "हाय हाय, क्या मैं किसी तरह वहाँ पहुँच कर अपना सन्देह निवृत्त नहीं कर सकता!"

यकायक गोपालसिंह चमक गए। उनके पीछे से किसी की महीन आवाज सुनाई पड़ी—"महाराज, क्या दासी कोई सेवा कर सकती है?" चौंक के घूमे और देखा कि एक खूबसूरत तिलिस्मी पुतली उनके पीछे खड़ी हुई है जो उनके देखते ही अदब से हाथ छोड़ और सिर झुका कर बोली, "क्या दासी महाराज की कोई सेवा कर सकती है?"

ताज्जुब भरे स्वर में गोपालसिंह ने पूछा, "तुम कौन हो यहाँ कैसे आईं और मेरे लिये क्या कर सकती हो यह सुनने के पहिले मैं यह जानना चाहता हूँ कि उस मैदान में जो लोग मुझको नजर आये क्या मैं उनके पास जा सकता हूँ?"

सिर हिला पुतली बोली, "जी नहीं।" गोपालसिंह ने पूछा, "क्यों?" पुतली ने जवाब दिया, "वे लोग तिलिस्म के चौथे दर्जे में हैं और वह हिस्सा अभी टूटा नहीं।" गोपालसिंह ने पूछा, "अच्छा वे हैं कौन यह तुम बता सकती हो?"

गर्दन हिला कर पुतली बोली, "जी नहीं।" गोपालसिंह थोड़ी देर कुछ सोचते रहे इसके बाद बोले, "कोई तर्कीब ऐसी है जिससे मैं जान सकूँ कि वे लोग कौन हैं?" पुतली ने पूछा, "बिना चौथे दर्जे का तिलिस्म तोड़े?" गोपालसिंह ने कहा, "हाँ क्योंकि मैं उतना सब्र नहीं कर सकता।" पुतली कुछ सोच कर बोली, "महाराज अगर 'मणि-भवन' जाँय तो शायद वहाँ कुछ पता लग सके।"

गोपालसिंह जल्दी से बोले, "तुमने ठीक याद कराया, अच्छा 'मणि-भवन' जाने का कोई सहज रास्ता बता सकती हो?" एक खिड़की की तरफ उँगली उठा कर पुतली बोली, "उसे खोलने से महाराज को मणि-भवन अपने सामने ही नजर आवेगा।"

गोपालसिंह झपट कर उस खिड़की के पास गये और अपने पास वाली ताली लगा कर उसका पल्ला खोला। जाली वाला पल्ला नजर आया जिसको हटाया तो लोहे के छड़ों का पल्ला दिखाई पड़ा, घूम कर पुतली से बोले, "इन छड़ों को तोड़ने की तो कोई तर्कीब मेरे पास नहीं है।" पुतली अदब से बोली, "मगर महाराज की ताली इस पल्ले को खोल सकेगी।" गोपालसिंह आश्चर्य से बोले, "क्या ऐसी बात है!" और तब वह छोटा सूराख खोज कर उसमें ताली डाली। आश्चर्य की बात थी कि वह सहज हो में घूम गई और साथ ही वह लोहे के छड़ों वाला जंगला भी खुल गया। गोपालसिंह ने उसके अन्दर पैर रखते हुए उस पुतली से कुछ कहने के लिए गर्दन घुमाई पर वह न जाने कहाँ गायब हो चुकी थी।

उसी तरह की लम्बी सुरंग के बाद वैसी ही खुली जगह नजर आ रही थी पर उसके बाद ही एक बड़ी इमारत भी दीख रही थी जिसे गौर से देख कर गोपालसिंह बोले, "बेशक मणि-भवन ही तो है!" और तब तेजी से उस सुरंग में चलने लगे। यहाँ भी सुरंग के दोनों तरफ की दीवारों में तरह तरह की तस्वीरें बनी नजर आ रही थीं पर गोपालसिंह इतनी उतावली में थे कि उनको देखने के लिए जरा भी न रुके। लम्बे लम्बे डग मारते हुए उन्होंने वह सुरंग पार की और बाहर निकले। अब मणि-भवन की सुन्दर इमारत इनके सामने थी।

जवाहिरात जड़े इस 'मणि-भवन' का पूरा हाल पाठक पहिले पढ़ चुके हैं* इसलिए हम इस इमारत के बारे में इस जगह कुछ भी न लिख कर सीधे गोपालसिंह के साथ चलते और देखते हैं कि वे क्या करते हैं खास कर इसलिए कि वे न जाने क्यों बड़ी ही उतावली में हैं और किसी बात को शीघ्र जान लेने की बड़ी गहरी अभिलाषा उन्हें कहीं भी रुकने नहीं दे रही है। मणि-भवन का सदर दर्वाजा

---

* देखिए भूतनाथ अठारहवाँ भाग, चौथा बयान।

दूसरी तरफ पड़ता था जिधर वे तेजी के साथ चल पड़े और उसके पास पहुँच मामूली ढंग पर उसकी खिड़की खोली। भीतर से पीतल के सिपाही ने झाँक कर देखा और इसके पहिले कि वह कुछ पूछे या कह सके गोपालसिंह ने अपनी तिलिस्मी तलवार उसके सिर से छुलाते हुए कहा, "मैं रघुनाथ ज्योतिषी के पास जाना चाहता हूँ।" सिपाही खिड़की के पास से हट गया मगर कुछ ही देर बाद पुनः वापस आकर बोला, "महाराज, आचार्य रघुनाथ आज कल एक पुरश्चरण कर रहे हैं और मौन व्रत लिए हुए हैं, महाराज से बातें कर न सकेंगे। बहुत ही आवश्यक काम हो तो लिख कर प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं मगर वह भी अधिक नहीं।"

गोपालसिंह हँसे और बोले, "अच्छा मैं लिख के ही बातें कर लूँगा।" सिपाही सलाम कर पीछे हट गया और साथ ही दर्वाजा खुल गया। वह सिपाही बोला, "महाराज इधर पधारें।"

प्रभाकरसिंह के साथ इस मणि-भवन में आकर पाठक यहाँ का पूरा हाल और महाराज सूर्यकान्त के दर्बार की कैफियत देख चुके हैं इसलिए हमें इस जगह के बारे में उन्हें कुछ भी बताने की जरूरत नहीं और न हम कुछ कहना ही चाहते हैं। इस समय तो हम उनको लिए हुए सीधे गोपालसिंह के साथ चलते हैं जो न जाने किस उतावली में हैं कि उनके पैर भी सीधे पड़ नहीं रहे हैं और वे झपटते हुए उस पीतल के सिपाही के पीछे पीछे चले जा रहे हैं जो उनकी जल्दीबाजी देख खुद भी लम्बे डग भरता हुआ बढ़ रहा है। जिस समय वह उस बड़े कमरे के ठीक दूसरी तरफ पहुँचा तो वह रुक गया और एक दर्वाजे पर हाथ रख कर बोला, "आचार्य यहीं विराज रहे हैं।" गोपालसिंह ने गर्दन झुका कर 'हूँ' कहा और उस सिपाही ने न जाने क्या तर्कीब की कि वह दर्वाजा खुल गया।

गोपालसिंह कमरे के अन्दर घुसना ही चाहते थे कि भीतर की हालत देख झिझक कर रुक गए। भीतर के कमरे में एक छोटे मोटे आश्रम का पूरा साँचा बना हुआ था। एक छोटी पहाड़ी के नीचे सुहावने जंगल का दृश्य उनके सामने था जिसके बीच में से एक नाला कल कल शब्द करता हुआ बह रहा था। स्थान स्थान पर पर्ण-कुटीरें बनी हुई थीं जिनमें बैठती पढ़ती पूजापाठ आदि करती मूर्तियाँ नजर आ रही थीं, और कहीं कहीं सुन्दर मृग भी दिखाई पड़ रहे थे।

गोपालसिंह इस दृश्य को देख कर चौंक गए और उनके मुँह से निकल गया—"यह मैं कहाँ आ गया?" पर उसी समय जटाजूट और वल्कलधारी एक तेजोमय मूर्ति को खड़ाऊँ पहिरे अपने सामने आते देख वे कुछ सहम से गए। उनके पीछे

वाला सिपाही बोल उठा, "वह देखिये आचार्य रघुनाथ महाराज को आते देख स्वयम् ही पधार रहे हैं!"

यद्यपि गोपालसिंह जानते थे कि उनके सामने जो कुछ भी है वह केवल एक तिलिस्मी तमाशा है और जो मूरतें नजर आ रही हैं वे भी सब बनावटी हैं फिर भी इस समय उनके सामने आती हुई मूर्ति ऐसी भव्य थी कि उनके मन की बातें बिसर गईं और सिर आदर से झुक गया। दोनों हाथ जोड़ कर उन्होंने उस मूर्ति को विनम्र प्रणाम किया और बोले, "आचार्यश्री का दास गोपालसिंह संशय में पड़ कर कुछ प्रश्न करने की आज्ञा चाहता है।"

रघुनाथ पंडित पीछे की तरफ घूमे। इनका एक शिष्य इनके पीछे आ रहा था जो आगे बढ़ कर बोला, "आचार्य आजकल एक पुरश्चरण में हैं और मौन धारण किये हुए हैं।" गोपालसिंह बोले, "मुझे मालूम हो गया है और मैं ज्यादा समय न लूँगा, केवल दो ही चार प्रश्न करना चाहता हूँ।" शिष्य ने गुरु की तरफ देखा और उनका इशारा पाकर इनसे बोला, "अच्छा इधर पधारिये।"

एक पर्णकुटी के सामने वाले गोबर और चिकनी मिट्टी से लिपे चबूतरे पर मृगछाला बिछी चौकी पड़ी थी। शिष्य के साथ साथ गोपालसिंह इस जगह पहुँचे और उस कम्बल पर बैठ गये जो शिष्य ने इनके लिए बिछा दिया था और कुछ ही देर बाद आचार्य रघुनाथ ज्योतिषी भी आकर उस चौकी पर विराज गए। गोपालसिंह ने कुछ उठ कर उनकी अभ्यर्थना की और उन्होंने हाथ उठा मूक आशीर्वाद देने के बाद अपने शिष्य की तरफ देखा, जिसने एक पटिया और गेरू का एक टुकड़ा इनके सामने रख दिया और आप कुटिया के भीतर चला गया। आचार्य ने गोपालसिंह की तरफ देखा मानों इनसे कहा, "पूछो क्या पूछते हो?"

गोपालसिंह बोले, "महाराज, तिलिस्म के तीन दर्जे तोड़ कर मैं चौथा दर्जा तोड़ने के अभिप्राय से इधर आया था पर उस कार्य में कुछ बाधा पाकर विस्मित हो गया हूँ। ऐसा जान पड़ता है कि मानों मेरे किये यह काम न हो सकेगा और तिलिस्म का यह दर्जा बिना टूटा ही रह जायगा।"

रघुनाथ आचार्य ने स्थिर दृष्टि से गोपालसिंह को देखा और तब जरा देर के लिये आँखें बन्द कर लीं। ऐसा जान पड़ा मानों वे कुछ गम्भीर चिन्ता कर रहे हैं। थोड़ी देर बाद उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और गेरू से उस पटिया पर कुछ लकीरें खींचीं, कुछ अंक और अक्षर भरे और जोड़ना घटाना गुणा भाग कर हिसाब मिला के पटिया के दूसरी तरफ कुछ लिख गोपालसिंह के सामने किया।

गोपालसिंह ने झुक कर पढ़ा, यह लिखा हुआ था––"चौथा दर्जा भी तुम्हारे ही हाथों से टूटेगा मगर अभी नहीं, कुछ विलम्ब से––नक्षत्र स्थिति तुम्हारे विपरीत है।"

गोपालसिंह उतावली से बोले, "अभी नहीं तो कब ?" आचार्य ने पुनः कुछ लिख पटिया आगे की ओर किया, उन्होंने पढ़ा, "शीघ्र ही चौथे दर्जे की ताली तुमको मिलेगी और तब तुम उस को तोड़ कर उस हिस्से की सब दौलत पर कब्जा करोगे।" गोपालसिंह ने कमर में हाथ डाला और तिलिस्मी ताली दिखा कर बोले, "चौथे दर्जे की ताली तो यह मेरे पास है !" आचार्य ने ताली देख गर्दन हिलाई और पटिया पर लिखा––"यह ताली तिलिस्म के दारोगा अर्थात् उसके लिये है जो तिलिस्म तोड़ने के काम में तुम्हारी सहायता करेगा या कर रहा होगा। तिलिस्म तोड़ने वाली ताली यह नहीं है।" गोपालसिंह ने आश्चर्य से पूछा, "तो वह ताली कैसी है, कब मुझको मिलेगी, और इस समय कहाँ है ?" जवाब मिला, "वह ताली पन्ने की है, सत्ताईस महीनों के बाद तुमको मिलेगी, और इस समय तुम्हारे शत्रु के पास है।" गोपालसिंह के मुँह से निकल गया––"मेरा शत्रु कौन ?" पर जवाब में ज्योतिषीजी ने केवल गर्दन हिलाई मानों यह कहा, "मैं नहीं जानता।" गोपालसिंह कुछ देर चुप रहे और गम्भीर भाव से तरह तरह की बातें सोचते रहे। इसके बाद उन्होंने पूछा, "क्या मुझे वह ताली जरूर मिलेगी ?" गर्दन हिला कर पूर्ण विश्वास के साथ इशारा हुआ––"अवश्य !" गोपालसिंह ने पूछा, "तो अब मेरा कर्त्तव्य अब क्या है ?"

ज्योतिषाचार्य ने पुनः पटरी पर कुछ लिखा और गिना, तब यह लिख कर गोपालसिंह के सामने किया, "तिलिस्म के बाहर हो जाओ और राज काज करो। समय जब तुम्हें वह ताली दे दे तब तुम बाकी का काम पूरा करना।" गोपालसिंह ने इसे पढ़ कर कहा, "मगर मेरे राज्य पर तो मेरे शत्रुओं का अधिकार है ?" आचार्य ने गर्दन हिलाई तब पटिया पर लिखा, "ऐसा नहीं है। तुम्हारे मित्र-गण बहुत प्रबल हैं और शत्रु-गण भागने की तैयारी कर रहे हैं।" गोपालसिंह ने पूछा, "क्या मैं उस पर कायम रहूँ जो आदेश आप दे रहे हैं ?" पटिया पर लिख कर उनके सामने किया गया, "तुम्हारे जन्म-पत्र में ऐसा ही लिखा है, इसके सिवाय और कुछ करना तुम्हारे लिए शुभ नहीं होगा।"

गोपालसिंह और भी कुछ पूछना ही चाहते थे कि उसी समय कुटिया के अन्दर से शंख बजने की आवाज आई जिसे सुनते ही ज्योतिषीजी ने उठने का

भाव दिखाया। गोपालसिंह ने हाथ जोड़ कर कहा, "केवल थोड़ा समय और मुझे दिया जाय।" जवाब में जरा मुस्कुरा कर वे पुनः स्थिर बैठ गये। गोपालसिंह ने पूछा, "जो लोग यहाँ बन्द हैं या जिन्हें मैं अपने पीछे छोड़ आया हूँ उनकी क्या गति होगी ?" जवाब मिला, "अभी उन्हें यहीं रहना पड़ेगा, अब तुम्हारी उनकी भेंट तभी होगी जब चौथा दर्जा टूट जायगा।" गोपालसिंह घबड़ा कर बोले, "क्या ऐसी बात है ! अच्छा मैं उनसे मिल तो सकूँगा ?" आचार्यजी ने गम्भीरता से गर्दन हिला कर मानों इनकारी जाहिर की और तब पटिया पर लिखा, "तुम पीछे नहीं लौट सकते आगे ही बढ़ सकते हो, बिना चौथा दर्जा तोड़े पीछे जाने की चेष्टा मत करो।"

यकायक गोपालसिंह को कुछ याद आ गया और वे उतावली से बोले, "उस तरफ मैंने कुछ कैदियों को देखा जिन्हें दूरी के कारण ठीक पहिचान न सका मगर एक भयानक सन्देह मुझे व्याकुल कर रहा है। क्या मैं जान सकता हूँ कि वे कौन हैं ?" आचार्य ने गर्दन हिलाई, मानों 'ना' कहा तब कुछ विचार कर पटरी पर यह लिखा, "मगर चाहे जो भी हों, सत्ताईस महीने बाद तुमको मिलेहींगे, बहुत उतावले मत बनो।" गोपालसिंह उदास होकर बोले, "अवश्य मिलेंगे ? जीते जागते मिलेंगे ?" आचार्य ने छाती पर हाथ रख के गर्दन हिलाई, मानों विश्वास दिलाया कि अवश्य मिलेंगे और जीते जागते मिलेंगे। गोपालसिंह ने पुनः पूछा, "क्या यहाँ वालों से मिलने की सब आशा छोड़ दूँ ?" आचार्य मुस्कुराए, मानों कहते हों––"चेष्टा करके देख लो।" परन्तु इसी समय कुटिया के अन्दर से पुनः शंख बजने की आवाज आई और रघुनाथ ज्योतिषी कुछ घबड़ाहट के साथ उठ खड़े हुए। गोपालसिंह ने उन्हें दण्डवत किया और वे आशीर्वाद का हाथ उठा खड़ाऊँ खटखटाते कुटिया के अन्दर चले गये। गोपालसिंह भी पीछे की तरफ मुड़े मगर यकायक चमक कर यह कहते हुए घूमे, "ओह, इतनी जरूरी बात पूछना तो भूल ही गया ! आखिर वे दोनों थे कौन ? क्या वे ही जिन्हें मैं समझता हूँ !" मगर अब वहाँ उनके प्रश्नों का उत्तर देने वाला कौन था ?

तरह तरह की बातें सोचते हुए गोपालसिंह मणि-भवन के बाहर निकल आये। उस पीतल के सिपाही ने उन्हें अदब से सलाम किया और तब भीतर घुस भवन का फाटक बन्द कर लिया।

पाँचवाँ बयान

अब हम अपने पाठकों को एक ऐसे बाग में ले चलते हैं जो चारों ओर

से पहाड़ियों द्वारा घिरा रहने के कारण एक दम ही निराला और सूनसान हो रहा है।

यद्यपि रंग ढंग बता रहे हैं कि बहुत दिनों से इस बाग की सफाई नहीं हुई है और मालियों के सुघड़ हाथों की काट छाँट न होने के कारण इसके पेड़ पौधों ने भी मनमाना रूप धारण कर लिया है फिर भी इसके अन्दर से बहने वाली उस नहर की बदौलत जिसका पानी छोटी छोटी नहरों द्वारा बाग भर में फैल रहा है यहाँ हरियाली की किसी तरह पर कमी नहीं है। बाग में क्यारियों और रविशों की भी कमी नहीं है पर उनके अन्दर खुशनुमा और खूबसूरत पेड़ पौधों के बजाय इस समय ज्यादातर साधारण पौधे ही अधिक नजर आ रहे हैं और खुशबूदार फूलों की जगह काँटों ने ले रक्खी है, फिर भी स्थान बहुत मनोरम है और उन फलों के पेड़ों की बदौलत जो बहुतायत से सब तरफ और चारों ओर की पहाड़ियों पर भी काफी ऊँचाई तक लगे हुए हैं, यहाँ रहने वालों को भूख प्यास की तकलीफ नहीं हो सकती।

इस बाग के पूरब तरफ एक तिमंजिली इमारत है जो इतनी बड़ी है कि उसके अन्दर सैकड़ों ही आदमियों का गुजारा हो सकता है। यद्यपि उचित देख रेख न होने के कारण इस इमारत की भी हालत इस समय बहुत अच्छी नहीं है फिर भी यह इस लायक है कि इसमें रहने वालों को किसी तरह के मौसिम में तकलीफ नहीं हो सकती और इस समय इसी इमारत के उस दीवानखाने में हम अपने पाठकों को ले चलते हैं जिसमें अगर हम भूलते नहीं हैं तो आज के पहिले भी एकाध बार वे आ चुके हैं क्योंकि इसी जगह प्रभाकरसिंह से मालती बनी हुई मनोरमा की मुलाकात उस समय हुई थी जब वे तिलिस्म तोड़ते हुए यहाँ तक आये थे*।

दीवानखाने के बीचोबीच में रक्खे एक बहुत बड़े जड़ाऊ सिंहासन पर हाथी-दाँत की एक सीतलपाटी बिछी हुई है और उस पर वृद्धा देवीरानी लेटी हुई हैं। पैताने की तरफ मैना बैठी धीरे धीरे उनके पाँव दबा रही है और कभी कभी उनसे बातें भी करती जाती है। इन दोनों के सिवाय और कोई यहाँ नजर नहीं आता और रंग ढंग से जान पड़ता है कि इनके इलावा इस इमारत भर में कहीं कोई नहीं है।

बहुत देर से बूआजी को चुप पा मैना के मन में ख्याल उठ रहा था कि

---

* देखिए भूतनाथ तीसरा भाग, सातवाँ बयान।

शायद ये सो गईं, मगर उसी समय बेचैनी के साथ बूआजी ने करवट बदली और जरा सिर घुमा मैना की तरफ देख कर बोलीं, "यही बात है मैना, शेरसिंह जरूर किसी मुसीबत में पड़ गया और अब सिवाय इसके और कोई चारा नहीं है कि हम लोग बाहर निकलें और सही सही बातों का पता लगावें।"

मैना ने सिर झुका कर जवाब दिया, "इतने दिन बीत जाने पर भी सरदार साहब के न लौटने से शक तो मुझको भी यही होता है कि वे किसी झमेले में पड़ गये, लेकिन इस बात का पता लगाने के लिए आपको तकलीफ करने की क्या जरूरत है। लौंडी हाजिर है, आज्ञा दीजिए तो बाहर निकलूँ और जो कुछ पता लग सके आपको खबर दूँ।"

बूआ०। और अगर तू किसी आफत में पड़ गई तब? शेरसिंह की तरह तेरी भी राह देखती पड़ी रहूँगी! तब अकेले और भी ज्यादे मन घबराएगा।

मैना०। मैं बहुत सावधान रहूँगी, किसी तरह की जोखिम में हरगिज न पड़ूँगी और जितना समय आप मुझको देंगी उसके भीतर ही लौट आऊँगी। मगर मुझे आपकी तकलीफ का खयाल होता है।

बूआ०। मेरी तकलीफ का खयाल छोड़ दे। जो शारीरिक कष्ट मुझे हो रहा है या हो सकता है उससे कहीं ज्यादा मानसिक अवस्था मुझे कष्ट पहुँचा रही है। जिस तिलिस्म को मैं अपना घर समझती थी और जिसके बारे में मुझको खयाल था कि आँख मूँद कर जब जहाँ चाहूँ जा आ सकती हूँ उसी में एक अनजान अपरिचित व्यक्ति की तरह पड़े रहते मुझे जो चोट लगती है उसे तू समझ नहीं सकती।

मैना०। आपके चित्त की वृत्ति को मैं खूब समझ रही हूँ और इसी लिए आपको अकेले छोड़ते डरती हूँ। मुझे भय होता है कि आप फिर तिलिस्मी मामलों में जबर्दस्ती करेंगी और तकलीफ उठावेंगी जैसा इधर कई बार हो चुका है! अभी थोड़ी ही देर पहिले आप पुनः एक बार चौथे दर्जे में जाने की कोशिश करने की बात कह रही थीं!

बूआ०। मेरी समझ ही में नहीं आता कि यह क्या हो गया और क्यों वे रास्ते और दर्वाजे जो मेरे एक इशारे मात्र से खुल जाया करते थे ऐसे बन्द हो गए कि किसी तर्कीब से, यहाँ तक कि तिलिस्मी किताब की मदद से भी, खुलने का नाम नहीं लेते!

मैना०। असली कारण चाहे जो कुछ भी हो मगर मेरे मन में तो बार बार

यही बात आती है कि राजा गोपालसिंह तिलिस्म के अन्दर जो कुछ कर रहे हैं
उसी का यह नतीजा है।

बूआ० । मगर इसके पहिले भी तो गोपाल तिलिस्म तोड़ रहा था और मैं
जब चाहती थी तब उसके पास पहुँच जाती थी!

मैना० । बेशक ऐसा ही था।

बूआ० । तो अब क्या बात हो गई कि मेरी ताकत ने एक दम से ऐसा
जवाब दे दिया? तिलिस्म के तीन दर्जे मैंने जब उससे बात करने में तुड़वा दिये
तो चौथे दर्जे में ऐसी कौन सी बात आ पड़ी कि मैं उन जगहों में भी अब आ
जा नहीं सकती जो इस तिलिस्म के बाहरी हिस्से कहे जा सकते हैं?

मैना० । बेशक कोई नई बात जरूर हुई तभी तो ऐसा हुआ है।

बूआ० । और इसी से मुझे आशंका होती है कि गोपाल कहीं किसी मुसीबत
में न पड़ गया हो।

मैना० । ऐसा होना कोई असम्भव बात नहीं है, पर आपने सरदार साहब
को जिस तिलिस्मी किताब के वास्ते भेजा हुआ है वह इस मौके पर क्या कर
सकती है?

बूआ० । कुछ आशा होती है कि शायद उसकी मदद से कोई काम बन सके
मगर कुछ विशेष नहीं, क्योंकि जहाँ तक मेरी जानकारी है वह किताब किसी
दूसरे ही काम के लिए है और उसमें तिलिस्म के किसी अन्य हिस्से का वर्णन है।

मैना० । अगर ऐसा ही है तो फिर आप उसके लिये इतना व्याकुल क्यों हैं
कि सब काम काज छोड़ के उसी को ढूँढ़ निकालने के काम में सरदार साहब को
लगा दिया है?

बूआजी मैना की इस बात का कोई जवाब देना ही चाहती थीं कि यकायक
रुक गईं। किसी जगह से खटके की सी आवाज आई जिसने उन्हें चौंका दिया
और उन्हीं के साथ साथ मैना भी ताज्जुब में आकर इधर उधर देखने लगी।
पुनः वैसी ही आवाज आई और इस बार साफ मालूम हुआ कि सिंहासन के पीछे
की तरफ जो दीवार है उसी के अन्दर से यह आई है। बूआजी यह जानते ही
चमक कर उठ बैठीं और गौर से उस तरफ देखने लगीं।

हमारे जो पाठक आज से पहिले इस दीवानखाने की सैर कर चुके हैं वे
बखूबी जानते हैं कि इसकी हालत कैसी है। राजशाही ढंग पर बने हुए इस
दीवानखाने की छत बड़े बड़े चालीस छः पहले खम्भों पर कायम है जो काले

पत्थर के बने हुए हैं और उन पर सोने की पच्चीकारी का काम किया हुआ है।
सामने की तरफ बाग और दाहिने बाएँ दोनों तरफ दो बारहदरियाँ बनी हुई हैं,
मगर पीछे की तरफ जो दीवार है उस पर जड़ाऊ तथा मीनाकारी का काम बना
हुआ है और एक शिकारगाह का दृश्य दिखाया गया है जिसके बनाने में कारी-
गरों ने जरूर बरसों मेहनत की होगी। इसी दीवार के बीचोबीच में मगर उससे
कुछ हट कर वह सिंहासन रखा हुआ था जिस पर बूआजी और मैना बैठी हुई
थीं और इससे कोई चार पाँच हाथ ऊँचे पर, उसी दीवार में, एक बहुत ही
खूबसूरत खिड़की बनी हुई थी जिसका पल्ला बन्द था और जिसके अन्दर क्या
है इस बात का पता कम से कम मैना को न था क्योंकि उसने कभी इसे खुला
हुआ देखा न था।

बूआजी और मैना उस दीवार की तरफ देख ही रही थीं कि यकायक पुनः
वैसी ही आवाज आई और तब एक झटके के साथ उस खिड़की के दोनों पल्ले खुल
गये। एक नौजवान उसके अन्दर खड़ा नजर आया जिसको देखते ही इन दोनों के
मुँह से ताज्जुब की चीख निकल गई, जिसे उसने भी सुना और चौंक कर नीचे
देखते ही बोल उठा, "हैं, बूआजी आप! कहाँ रहीं आप इतने दिनों से?"
जवाब में रुँधे गले से बूआजी ने कहा, "बेटा गोपाल, क्या बताऊँ मैं? मेरी
ताकत ने एक दम जवाब दे दिया और मैं तिलिस्म में घुसने से असमर्थ होकर
कितने ही समय से बेकार यहाँ पड़ी हुई हूँ!"

गोपालसिंह ने, क्योंकि यह सचमुच वे ही थे, एक बार अपने सामने की ओर
देखा और तब कहा, "अच्छा मैं आता हूँ तो आपसे बात करता हूँ।" पीछे हट कर
उन्होंने खिड़की बन्द कर दी और कुछ देर के लिए सन्नाटा हो गया जिसमें बूआजी
और मैना केवल ताज्जुब और प्रसन्नता भरी निगाहें एक दूसरे पर डालती रहीं।
थोड़ी देर बाद पुनः एक खटके की आवाज हुई और सिंहासन के पीछे की उस
शिकारगाह वाली दीवार में एक छोटा रास्ता दिखाई पड़ा जिसके अन्दर से निकल
कर गोपालसिंह बूआजी के पैरों पर गिर पड़े। बूआजी ने उन्हें उठा कर कलेजे से
लगा लिया और सुख तथा प्रेम के आँसुओं से उनका सिर भिगोती हुई बोलीं, "बेटा
गोपाल, तू अच्छी तरह तो रहा? कहाँ था तू इतने दिन!"

बड़ी देर के बाद मुश्किल से बूआजी ने गोपालसिंह को अपने से अलग किया
और दोनों हाथों से उनका सिर पकड़ गौर से देखती हुई बोलीं, "मगर तेरे चेहरे
पर तकलीफ की निशानियाँ हैं! जरूर तू किसी मुसीबत में पड़ गया था, बोल है

न यही बात ?" मैना के सलाम का जवाब देकर गोपालसिंह बोले, "यदि मुसीबत नहीं तो बहुत गहरे तिलिस्मी चक्कर में जरूर पड़ गया था, जिसने मुझे इतना परेशान कर दिया कि जिसका नाम नहीं।" बूआजी ने ताज्जुब से पूछा "चक्कर कैसा ?" गोपालसिंह ने कहा, "तिलिस्मी कारीगरी ने मुझे बताया था कि अब मैं पीछे जाने का खयाल छोड़ दूँ और आगे बढ़ कर तिलिस्म के बाहर निकल जाऊँ, मगर किसी बात का निश्चय कर लेने के इरादे ने ऐसा जोश मारा कि मैंने यह बात अमान्य कर दी और पीछे लौटा, बस ऐसे झमेले में पड़ गया कि कुछ पूछिये नहीं और इतने दिन बर्बाद हो गये सो अलग !"

बूआ० । तो क्या तिलिस्म तोड़ने का काम पूरा हो गया ?

गोपाल० (सिर हिला कर) जी नहीं, उसका चौथा दर्जा बिना टूटे रह गया, क्योंकि उसकी ताली मेरे पास नहीं थी ।

बूआ० । ताली नहीं थी ? मैंने अपने हाथ से वह ताली तुझे दी थी । क्या वह कहीं खो गई या कोई उसे तुझसे ले गया ?

गोपाल० । (तिलिस्मी ताली कमर से निकाल और बूआजी के सामने रख कर) जी नहीं, वह ताली तो अभी तक मौजूद है मगर यह वह है नहीं जिसकी मदद से तिलिस्म टूटेगा । वास्तव में यह मेरे लिए बनी ही नहीं है !

बूआ० । सो कैसी बात ?

गोपाल० । तिलिस्म ने मुझे बताया कि यह ताली मेरे लिए नहीं बल्कि तिलिस्म के दारोगा यानी उसके लिए है जो तिलिस्मी मामलों में मेरी मदद कर रहा होगा अर्थात् आप अथवा शेरसिंह आदि । इसकी मदद से आप लोग सब जगह आ जा सकते हैं मगर मैं नहीं, और इसकी सहायता से तिलिस्म भी टूट नहीं सकता। उसके लिए किसी दूसरे ही ताली की जरूरत पड़ेगी जो पन्ने की बनी हुई है और इस समय मेरे किसी शत्रु के पास है ।

बूआ० । (ताज्जुब से गोपालसिंह का मुँह देखती हुई) यह तू कह क्या रहा है गोपाल !

गोपाल० । मैं बहुत ठीक कह रहा हूँ बूआजी, मगर जब तक पूरी पूरी बातें न कहूँगा आपकी समझ में ठीक से न आवेगा, अच्छा सुनिये ।

इतना कह गोपालसिंह ने वे सब बातें पूरी पूरी बूआजी को कह सुनाईं जो 'मणि-भवन' में रघुनाथ ज्योतिषी से उनकी हुई थीं और अन्त में कहा, "यद्यपि

ज्योतिषीजी ने बता दिया था कि यह ताली कुछ काम न करेगी और पीछे जाने को भी मना कर दिया था फिर भी मेरा मन न माना और मैं इसकी मदद से तिलिस्म का एक हिस्सा खोलने की कोशिश करने लगा, नतीजा यह हुआ कि ऐसे चक्कर में पड़ा कि हवास गुम हो गये और बड़ी मुश्किल से इतने दिनों के बाद कहीं जाकर सही सलामत निकल कर यहाँ आने पाया हूँ ।"

बूआ० । वह मुसीबत क्या थी सो तो मैं पीछे पूछूंगी पर पहिले यह कह कि जब तिलिस्मी बातों ने तुझे बता दिया था कि अब तेरा रास्ता फलाँ है और फलाँ नहीं तब तूने यह मूर्खता क्यों की कि जबर्दस्ती दूसरे रास्ते चला ? क्या मैंने तुझको समझा नहीं दिया था कि....

गोपाल० । (बात काट कर) मैं ऐसे लोगों को अपने पीछे छोड़ता आ रहा था जिनका कम से कम एक बार पुनः दर्शन किए बगैर रह ही नहीं सकता था और उसी लालच ने मुझसे यह गलती कराई ।

बूआ० । (ताज्जुब से) वे कौन ?

गोपाल० । मेरे चाचाजी दामोदरसिंहजी और पुजारीजी ।

बूआ० । हाँ ! इन लोगों से तेरी भेंट हुई । तूने अपनी आँखों से इन्हें देखा ?

गोपाल० । केवल देखा ही नहीं इनके चरण छूए और बातें कीं, और अगर चाहता तो उसी समय इन्हें तिलिस्म के बाहर भी कर सकता था पर चाचाजी बोले कि 'पूरा तिलिस्म तोड़ लोगे तभी एक साथ ही बाहर निकलेंगे', अस्तु जल्दी के मारे पूरे तौर पर बातें भी नहीं की और उन्हें वहीं छोड़ आगे बढ़ गया, नतीजा यह हुआ कि पीछे लौट कर मिल भी न सका और मिलने की कोशिश की तो आफत में पड़ गया ।

बूआ० । (प्रसन्न होकर) खैर कोई हर्ज नहीं, सत्ताईस महीने कोई बहुत लम्बा समय नहीं है, पुनः भेंट होगी ही, पर यह बता पुजारीजी मजे में हैं ? शंकरसिंह और दामोदरसिंह अच्छी तरह हैं ? बहूरानी कुशलपूर्वक है ? बेचारी बहुत दुखी होगी !

गोपाल० । मानसिक अवस्था जो कुछ भी हो पर शरीर से सब मजे में हैं और बूआजी, मुझे तो विश्वास होता है कि यद्यपि मैं ऐसा न कर सका फिर भी इस ताली और उस किताब की मदद से जो आपके पास है आप तिलिस्म में जाकर इन लोगों से जरूर मिल सकती हैं और उनका भी पता लगा सकती हैं कि वे कौन हैं जिनको खिड़की की राह दूर जंगल में देख कर मैं घबड़ा गया था और अभी तक ।

बूआ० । मैं जरूर जाऊँगी और जब ज्योतिषी रघुनाथ की मूरत

है तो बात जरूर सच भी होगी ही, पर अभी नहीं कुछ समय के बाद। अभी तू मुझे तिलिस्म का हाल सुना और यह कहा कि आखिरी दफे जब तू हम लोगों से जुदा हुआ तो कहाँ गया, क्या क्या किया और क्या क्या देखा सुना ?

गोपाल०। मैं सब कुछ सुनाऊँगा पर अभी बहुत दूर से थका माँदा चला आ रहा हूँ और इतना समय हो जाने पर भी अब तक स्नान सन्ध्या तक कर न सका। मैं समझता हूँ इस जगह इन बातों का जरूर कुछ इन्तजाम होगा ?

बूआ०। हाँ हाँ यहाँ किसी बात की तकलीफ नहीं, नहाने के लिए झरना है और पेड़ों में फलों की भी कोई कमी नहीं है, और फिर अब तो अगर तू चाहे तो अपने महल में भी जा सकता है क्योंकि यद्यपि मैं इस बारे में कुछ भी नहीं कह सकती मगर ज्योतिषिजी ने तो बता ही दिया है कि वहाँ से तेरे दुश्मनों की हुकूमत हट रही है।

गोपाल०। बेशक, मगर फिर भी पता लगाये बिना एक दम चले जाना बुद्धिमानी न होगी, और कुछ नहीं तो एक बार मैना को भेज कर ही हाल चाल का पता लगा लेना मैं पसन्द करूँगा मगर शेरसिंह होते तो ज्यादा अच्छा होता, आपके साथ मैं उनको नहीं देख रहा हूँ, वे कहाँ हैं ?

बूआ०। जो बात तेरे साथ हुई वही मेरे साथ भी हुई। मैं शेर और मैना को लेकर जो तिलिस्म के बाहर हुई तो फिर अन्दर जा न सकी। बहुतेरी चेष्टा की मगर वे ही दर्वाजे जो मेरे एक इशारे मात्र से खुल जाते थे पत्थर की चट्टान बन गए और टस से मस न हुए। मैं....

गोपाल०। शायद इसका सबब वही होगा जो ज्योतिषीजी ने बताया, अर्थात् आपके पास यह ताली न थी जो आप मुझे दिए हुई थीं।

बूआ०। जरूर ऐसा ही होगा, पर यह बात तो तब मुझको मालूम न थी, अस्तु बड़ा घबड़ाई और मेरे मन में यह खयाल हुआ कि शायद कोई तिलिस्मी मामला गड़बड़ाया है अथवा तुम पर कोई आफत आई है। लाचार केवल मैना को पास रख शेरसिंह को बाहर भेजा कि रिक्तगन्थ का पता लगावे और मिल सके तो उसे लेकर आवे, शायद उसकी मदद से तिलिस्म में घुसा जा सके।

गोपाल०। रिक्तगन्थ ?

बूआ०। वह किताब जो बीरेन्द्रसिंह को विक्रमी तिलिस्म से मिली थी। वह भी एक अनमोल चीज है और मैंने बड़े लोगों से सुना है कि उसकी मदद से तिलिस्म का एक बहुत बड़ा हिस्सा शीघ्र ही टूटेगा।

गोपाल०। मैंने भी ऐसा सुना है, मगर क्या वह शेरसिंह के पास है ?

बूआ०। उसे बीरेन्द्रसिंह के खोहमहल से भूतनाथ ऐयार ले गया था, उससे इन्द्रदेव ने छीन लिया और उसे अपने किसी दोस्त को दिया कि पुनः ठिकाने रख आवे मगर उससे शेर को मिल गई और मेरे कहने से वह बहुत दिनों तक उसे अपने ही पास रक्खे रहा, पर एक दिन कम्बख्त शिवदत्त के ऐयारों ने वह किताब उड़ा ली जिसके कब्जे से उसे निकालने की शेर ने बहुत कोशिश की पर कामयाब न हुआ। फिर पता लगा कि वह घूमती फिरती किसी तरह रोहतासगढ़ के तहखाने में पहुँच गई है और उसकी चौबीस नम्बर वाली कोठरी में बन्द है !

गोपाल०। ठीक है, मेरे सामने ही मैना ने वह खबर आपको दी थी।

बूआ०। हाँ तो उसके लिए मैं खुद वहाँ गई और उसे खोजा पर वह न मिली। फिर शेरसिंह को पता लगा कि वह एक औरत के पास है जो तालाब वाले तिलिस्मी मकान में रहती है और जिसके काम बड़े भयानक होते हैं। यहीं के मामले में लाचार होकर मैंने शेरसिंह को उस किताब का पता लगाने और बन पड़े तो ले आने को भेजा मगर उसको गये तो मुद्दत हो गई और फिर वह लौट कर नहीं आया, क्या जाने गिरफ्तार हो गया या किसी मुसीबत में पड़ गया। अब शेर आवे तो ठीक हाल मालूम हो....

"मैं भी आ ही गया" यह आवाज बाहर की तरफ से आई और सभों ने घूम कर देखा तो शेरसिंह पर निगाह पड़ी जो सीढ़ियाँ चढ़ इस दीवानखाने में आ रहे थे। गोपालसिंह को देखते ही शेरसिंह बोल उठे, "वाह वाह, राजा साहब भी यहाँ मौजूद हैं ! क्या मैं तिलिस्म टूटने की बधाई दूँ ?"

बूआजी बोलीं, "आओ आओ शेरसिंह, तुमने इतने दिन कहाँ लगा दिये कुछ समझ में नहीं आता। गोपाल अभी पूरा तिलिस्म नहीं तोड़ सका है, कुछ विघ्न पड़ गया है जिससे इसे अपना काम अधूरा ही छोड़ कर चले आना पड़ा। अब तुम्हें इसको लेकर जमानिया जाना और वहाँ इसकी मदद करनी होगी।"

शेरसिंह ने आगे बढ़ कर बूआजी के पैर छूए और गोपालसिंह को सलाम करने बाद उनसे पूछा, "यह क्या बात ? विघ्न कैसा !" बूआजी बोलीं, "अब तुम आ गए हो तो सब कुछ सुनोगे ही, यह कहो कि तुम कर क्या आये ? रिक्तगन्थ का कुछ पता लगा ?"

शेर०। वह बलभद्रसिंह की बिचली लड़की कमलिनी के पास है। मुझे इस मामले में गहरा धोखा हो गया। तालाब वाले तिलिस्मी मकान में रहने वाली

कोई पिशाची नहीं बल्कि यही कमलिनी थीं और किसी मतलब से इन्हीं ने वह पिशाची वाला भेष धरा हुआ था। इन्द्रदेव से मिलने पर मुझे सब भेद मालूम हुआ और इतने दिनों तक एक तरह पर मैं राजा बीरेन्द्रसिंह और कमलिनी ही की मदद पर था।

गोपाल०। क्या कमलिनी आज कल जमानियाँ महल में नहीं रहती?

शेर०। जी नहीं, जमानिया तो उन्होंने कब का छोड़ दिया बल्कि इधर अपनी छोटी बहिन लाडिली को भी वहाँ से ले गई और अपने साथ ही रखती हैं*।

बूआ०। मगर रिक्तगन्थ की उसको क्या जरूरत पड़ गई?

शेर०। उनके सुनने में आया कि राजा बीरेन्द्रसिंह के लड़के रिक्तगन्थ की मदद से तिलिस्म को तोड़ेंगे जिन्हें आज कल (गोपालसिंह की तरफ देख कर) मायारानी ने गिरफ्तार कर रक्खा है, इस डर से कि कहीं वे तिलिस्म तोड़ कर उसकी दौलत न निकाल लें। कमलिनी उन्हें छुड़ाने की फिक्र में हैं बल्कि अब तक छुड़ा भी चुकी हों तो आश्चर्य नहीं और उनका इरादा है कि दोनों को वह रिक्तगन्थ देकर उनसे तिलिस्म तुड़वाएँ।

गोपाल०। अगर सचमुच यही इरादा है और उसके मन में कुछ कपट नहीं है तो बड़ी खुशी की बात है।

शेर०। कपट भला क्या हो सकता है। बल्कि अगर मेरी निगाहें मुझे धोखा नहीं देतीं तो मैं कह सकता हूँ कि वे इन्द्रजीतसिंह पर जान देती हैं बल्कि लाडिली भी आनन्दसिंह पर मोहित हो रही हैं।

गोपाल०। उसकी बहिन ने जो बर्ताव मेरे साथ किया उसकी बात सोच के मैं यह कहता हूँ। मुझे बेहद अंफसोस है कि यह तिलिस्म पूरा मेरे हाथ से टूट न सका और अभी मुझे बरसों ठहरना पड़ेगा मगर [illegible] बात की खुशी है कि अब मैं स्वतन्त्र हूँ और जमानिया जाकर उस कम्बख्त से बदला ले सकूँगा जिसकी बदौलत....

गोपालसिंह अपनी बात पूरी न कर सके और पिछली मुसीबतों को याद कर उनकी आँखें लाल हो आईं, पर बूआजी ने उनकी अवस्था देख उनका सिर अपनी छाती से लगा लिया और दिलासा देती हुई बोलीं, "ठंढा हो बेटा, ठंडा हो! अब तू स्वतन्त्र है और जो चाहे कर सकता है। अब तुझमें इतना ताकत आ गई है कि अपने दुश्मनों से जैसे चाहे वैसे बदला ले ले, अस्तु इस बात की फिक्र तो तू बिल्कुल छोड़ दे। अब जो कुछ हम लोगों के सोचने की बात है वह यही कि तुझे किस

* यह सब हाल चन्द्रकान्ता सन्तति में खुलासे तौर पर दिखाया जा चुका है।

तरह पर काम करना चाहिये और किस तरह प्रकट होना चाहिए। इस बात को मत भूल कि जमानिया की रिआया पाँच बरस से तुझे मुर्दा समझे हुए है और इस समय तेरे दुश्मनों के पूरे बहकावे और कब्जे में है और एक बात वह भी समझ ले जो शेर ने अभी कहा।

गोपाल०। (सिर उठा कर) वह कौन सी बात?

बूआ०। यही कि बीरेन्द्रसिंह के लड़के तेरा तिलिस्म तोड़ कर दौलत निकाल लेंगे इस बात का बाँधनूँ बन रहा है।

गोपाल०। (तेजी से) तो इससे क्या?

बूआ०। (हँस कर) तेरा तिलिस्म है, तेरी दौलत है, दूसरा ले जायगा तो तुझको....

गोपाल०। (बिगड़ कर) बूआजी, आप मुझे इतने छोटे दिल का समझती हैं!! आप नहीं जानतीं या मैं नहीं जानता कि इन्द्रजीत आनन्द मेरे कौन हैं या महाराज बीरेन्द्रसिंह मेरे कौन लगते हैं? और क्या यह भूल गई कि तिलिस्म जिसके नाम पर बँधा होता है वही उसकी दौलत का मालिक है न कि उसका राजा या दारोगा? और फिर सबसे बड़ी बात तो यह, कि मेरे अपने लिए मेरे हिस्से की जो दौलत और चीजें मैं रक्खी हुई देखता चला आ रहा हूँ उससे बढ़ कर और कौन सी चीज ऐसी हो ही सकती है जिसकी कामना मेरा दिल करेगा! वह दौलत और वे चीजें कुबेर के भंडार में भी न होंगी जो मेरे लिए "सूर्य-मण्डल" में रक्खी हुई हैं। क्या ले जाँयगे इन्द्रजीत और आनन्द अपने तिलिस्म से! बूआजी, मैं सच कहता हूँ कि आप भी उन चीजों को अगर देखेंगी तो भौंचक रह जायँगी, चलिए आप मेरे साथ और देखिये उन चीजों को—भाग्यवश मैं अभी भी वहाँ तक जा और वे चीजें आपको दिखा सकता हूँ।

बूआ०। (हँस कर) अच्छा अच्छा, जोश में मत आ, मैं तो तेरा दिल टटोलती थी, और असल मतलब तो मेरा यह था कि अगर–जैसा कि ज्योतिषीजी ने कहा–तुझे अब सत्ताईस महीनों के लिए तिलिस्म के बाहर चले ही जाना है तो यकायक जमानिया जाने से न बनेगा, कुछ चालाकी से काम करना पड़ेगा।

गोपाल०। यह तो मैं भी सोचता हूँ कि....

शेर०। यह सत्ताईस महीनों की क्या बात है? मैं नहीं समझा!

गोपालसिंह ने यह सुन कुछ कहना चाहा पर बूआजी ने रोक कर कहा, "बह सब मैं तुमसे कहती हूँ शेर, मगर तुम अब गोपाल को और मत रोको, सुबह से अभी तक यह जरूरी कामों और सन्ध्यावन्दन आदि से भी निपटा नहीं है। (गोपाल-

सिंह से) तुम जाओ गोपाल, सब तरह से फारिग हो आओ, तब तक मैं तुम्हारा किस्सा शेरसिंह से कहती हूँ और हम लोग यह भी सलाह करते हैं कि तुमको कैसे और क्या करना चाहिए।" गोपालसिंह ने जवाब दिया, "हाँ यही ठीक है, इतनी देर हो जाने के कारण मेरा सिर दर्द कर रहा है और तबीयत परेशान हो गई है, बिना सब कामों से निश्चिन्त हुए बात चीत में मन भी न लगेगा। मैं जाता हूँ, तब से आप लोग निश्चय कीजिए कि अब मेरे लिए क्या करना मुनासिब है। मैं लौट कर आऊँगा तो आपकी बातें सुन अपना भी विचार प्रकट करूँगा।"

गोपालसिंह चले गये और बूआजी ने शेरसिंह को वह सब हाल कह सुनाया जो गोपालसिंह की जुबानी सुना था, इसके बाद उन्होंने शेरसिंह से उनका खुलासा हाल सुना और तब सब कोई मिल कर सलाह करने लगे कि क्या करना मुनासिब है।

जब गोपालसिंह लौट कर आये तो इन लोगों की बातें खतम हो चुकी थीं और उ-को देखते ही बूआजी बोल उठीं. "गोपाल, मुझे शेर की राय बहुत पसन्द है, आ तू भी सुन ले और यदि तुझे भी पसन्द हो तो इसी वक्त से वैसी ही कारंवाई शुरू कर दी जाय।" गोपालसिंह ने कहा, "मैं जानता हूँ कि इनकी राय बहुत माकूल और अच्छी पडेगी और मैं बिना सुने ही उसे मानने को तैयार हूँ, फिर भी आप बताइये कि क्या आपने तय किया ?" बूआजी बोलीं, "मुख्तसर में वह यही है कि तू तो इसके साथ जमानिया जा और सबसे पहले इन्द्रजीत और आनन्द को मुन्दर की कैद से निकाल कर अपना साथी बना और इधर मैं तेरी यह ताली ले के तिलिस्म में घुसती और पुजारीजी तथा शंकरसिंह से मिलने की कोशिश करती हूँ, अगर सफल हो गई तो सहज ही में जान जाऊँगी कि वह पन्ने वाली ताली कौन सी और कहाँ है जिसके बिना तिलिस्म टूट नहीं सकता।"

गोपाल०। (खुश होकर) बस बस बस, आप यही करिये, बल्कि....

बूआ०। खैर पूरी बात तो सुन ले, आ यहाँ बैठ जा।

गोपालसिंह बूआजी के पास बैठ गये और सभों में बातचीत होने लगी।

प्रिय पाठक महाशय, अब हम इन लोगों का साथ छोड़ते हैं और थोड़ी देर के लिए आपको जमानिया महल में ले जा और एक आखिरी दृश्य दिखा इस बयान को यहीं पर खतम कर देते हैं।

आधी रात का समय होगा बल्कि उससे ज्यादा ही बीत गई होगी। तिलिस्मी बाग के चौथे दर्जे की किसी कोठरी के सामने एक नकाबपोश खड़ा है और अपने हाथ की चोर लालटेन की मदद से बड़े गौर से उसके जंगलेदार दर्वाजे की राह

कोठरी के भीतर का दृश्य देख रहा है।

एक बहुत पुराने और फटे हुए कम्बल पर कोई कैदी पड़ा हुआ है और एक गन्दी चादर से अपना मुंह सिर और समूचा बदन ढाँक कर उन मच्छरों से अपनी जान बचाने की कोशिश में है जिनकी यहाँ बहुतायात है। कोठरी बहुत छोटी है और सामान मद्दे वहाँ केवल दो एक फटे पुराने कपड़े दो ताँबे के घड़े और एक लोटे के सिवाय और कुछ नहीं है, हाँ एक तरफ कोने में कुछ खाने पीने का सामान जरूर पड़ा हुआ है जो भी निहायत रद्दी किस्म का और जिसकी हालत देखने से मालूम होता है कि कई दिनों पर बदला जाता है।

समूचे बदन के सिवाय मुँह भी ढका रहने के कारण उस बाहर वाले नकाबपोश के लिए यह निश्चय करना कठिन हो रहा है कि कम्बल पर सोया हुआ आदमी कौन है, अस्तु सब तरह से लाचार होने पर आखिर इच्छा न रहते हुए भी उसको लोहे वाले दर्वाजे पर उँगली से ठोकर मारनी ही पड़ी। दो तीन बार ठोकर मारने पर भी जब कुछ फल न हुआ तो लाचार मोटी सिकड़ी में लगे भारी ताले को एक बार उठा कर खिड़की ही पर पटका जिससे भारी सी आवाज हुई और उस कैदी ने नींद में भरे हुए ही करवट बदल कर उनींदे स्वर में कहा, "फिर आ गई तू ! क्या मुझे सोने भी न देगी।"

जवाब में इस नकाबपोश के मुँह से एक 'आह' निकल गई मगर उसने मुँह से कुछ न कह पुनः उँगली से जँगले पर ठोकर मारी। इस बार उस कैदी ने मुँह खोल कर देखा और लालटेन की रोशनी उसके चेहरे पर पड़ी, साथ ही उस नकाबपोश के मुँह से पुनः एक 'आह' निकल गई जिसे उसने फुर्ती से रोका और तब धीमे स्वर में कहा, "मैं वह नहीं हूँ जिसे आप समझ रहे हैं, जरा उठिए और मेरी दो एक बातों का जवाब दीजिये।"

आश्चर्य करता हुआ वह आदमी उठ कर बैठ गया। नकाबपोश ने अपनी ओर लालटेन की रोशनी घुमाई और नकाब हटा कर एक बार अपने चेहरे पर डाली तब उसे पुनः भीतर की तरफ घुमाया। पल भर के लिए उस आदमी ने इसका चेहरा देखा और तुरन्त ही ताज्जुब से बोल उठा, "तुम कौन !" नकाबपोश धीरे से बोला, "मैं अपना पूरा परिचय दूँगा पर आपका जान लेने के बाद—साथ ही जोर से बोलना भी मेरे लिए खतरनाक है, यहाँ पास आ जाइए और मेरी बातों का जवाब दीजिए।"

वह कैदी इतना सुनते ही उठ खड़ा हुआ और जंगले के पास आ गया। नकाब-

पोश ने हाथ वाली रोशनी उसके चेहरे पर दौड़ाई और बड़े गौर से देखने के बाद कहा, "क्या आप ही जमानिया के राजा गोपालसिंह हैं!" कैदी ने एक लम्बी साँस ली और कहा, "किसी समय था पर अब तो एक कैदी हूँ और हर घड़ी मौत की राह देखता रहता हूं। मगर यह बताओ कि तुम कौन हो?"

उस नकाबपोश के मुँह से निकला, "हाय, ऐसे प्रतापी राजा की यह अवस्था! समय, तू जो न करावे सो थोड़ा!! अच्छा ज्यादा बात करने का मौका नहीं है, मैं चुनार के राजा बीरेन्द्रसिंह का ताबेदार तेजसिंह हूँ और आपकी साली कमलिनी जी का भेजा हुआ यहाँ आया हूँ जिन्होंने मुझे इस बात का पता लगाने को भेजा है कि आप कहाँ बन्द हैं। ताज्जुब नहीं कि यही रात आपके कैदी जीवन की आखिरी रात हो और कल की सुबह को आप स्वतन्त्रता से देख सकें।"

चौंक कर वह कैदी बोला, "कमलिनी! वह कहाँ है?" तेजसिंह ने जवाब दिया, 'वे मुझको मायारानी की कैद से छुड़ा कर दोनों कुमारों को छुड़ाने के लिए गई हैं और उनको किसी हिफाजत की जगह में रख कर दो घण्टे के भीतर यहाँ लौट आवेंगी। मुझे इतना ही कहना है कि अब आप सोएँ नहीं जागते रहें और कमलिनी या मेरे लौटकर आते ही इस जगह के बाहर निकलने को तैयार रहें।"

कैदी०। दोनों कुमार कौन?

तेज०। राजा बीरेन्द्रसिंह के लड़के इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह। आपकी मायारानी ने उनको पकड़ कर कहीं बन्द कर रक्खा है और सुनने में आया है कि कल सुबह उनको जान से मार डालना चाहती है अस्तु उनको छुड़ाना जरूरी समझ वे पहिले उधर गई हैं। मैं भी उन्हीं के पास जाता हूँ और आपकी खबर उन्हें देता हूँ मगर हिफाजत के खयाल से यह चीज आपको दिए जाता हूँ जिसमें कम से कम दो तीन घण्टे आपकी जान पर कोई जोखिम न आवे, इसके बाद फिर कोई डर न रहेगा।

कैदी ने ताज्जुब से देखा कि तेजसिंह ने एक बड़ी सी मगर हलकी ढाल अपने कपड़ों के अन्दर से निकाली और छड़ों की राह कोठरी के भीतर डाल दी। कैदी इस ढाल को देख कर ताज्जुब से बोला, "यह मेरे किस काम आवेगी?" तेजसिंह बोले, "आज की रात मायारानी के लिए बहुत ही मनहूस रात होगी, ताज्जुब नहीं कि वह बौखला जाय और जल्दीबाजी में कुछ कर बैठे। कम से कम इसे आप अपने पास रखिए और मेरे या कमलिनी के लौटने की राह देखिये। हैं, यह आवाज कैसी! क्या कोई आता है? सिवाय मायारानी या उसके ऐयारों के और

कौन होगा! खैर आप बिलकुल न घबराएँ, हममें से कोई न कोई बहुत जल्द आकर आपको इस मुसीबत से बाहर करेगा।"

हाथ की रोशनी तेजसिंह ने बन्द कर दी और उसी अन्धकार में कहीं गुम हो गए। वह कैदी देर तक किसी आहट पर कान लगाए चुप पड़ा रहा परन्तु फिर किसी तरह की आवाज न आई और बहुत कोशिश करने पर भी आखिर धीरे धीरे वह नींद में गाफिल होने लगा।

जब सब तरह से सन्नाटा हो गया तो दो आदमी जो न जाने कब से और कहाँ छिपे खड़े थे अंधेरे ही में पुनः इस जंगले के सामने आए। जान पड़ता है कि वह भीतर वाला कैदी अभी नींद में पूरा गाफिल न हुआ था, क्योंकि उसने जंगले के बाहर से एक आदमी की आवाज सुनी, "मौका अच्छा है राजा साहब! मेरी तो राय है कि इसे हटा कर आप इस कोठरी में जा बैठें और जब तेजसिंह या कमलिनी आवें तो उन पर यह जाहिर करें कि आप ही इतने दिनों से यहाँ बन्द थे। ऐसा करने से आपका असल भेद और जो कुछ आपने इस बीच में किया वह सब का सब छिपा ही रह जायगा और गौतम वाला भेद भी प्रकट न होगा।" जवाब में दूसरे ने कहा, "राय आपकी बेशक ठीक है, मगर इसके चेहरे और मेरे चेहरे का फर्क कैसे छिपेगा?" जवाब में उसने कहा, "मैं देखते देखते आपकी सूरत ऐसी बना दूँगा कि कोई कभी कह ही न सकेगा कि आप बरसों से यहाँ बन्द नहीं थे।" जवाब में वह दूसरा आदमी हँस पड़ा और बोला, "तब वही कीजिए!"

पहिले आदमी ने कुछ सोच फिर कहा, "मगर एक मुश्किल है, इस जगह से इसको छुड़ाने के लिए यह ताला तोड़ना पड़ेगा!" जवाब में दूसरे ने कहा, "कोई जरूरत नहीं, मैं एक दूसरी राह से आपको इस कोठरी के अन्दर पहुँचा सकता हूँ।" सुनते ही वह बोला, "वाह वाह, तब तो फिर क्या बात है! लेकिन तब फुर्ती कीजिए, कहीं ऐसा न हो कि कमलिनी या तेजसिंह यहाँ आ पहुँचें अथवा मायारानी ही यहाँ पहुँच कर हमारे काम में विघ्न डाल दे!"

पाठक समझ ही गये होंगे कि ये बातें करने वाले राजा गोपालसिंह और शेरसिंह थे जिनकी आखिरी बात सुन गोपालसिंह ने कुछ कहा नहीं बल्कि उनका हाथ पकड़ लिया और किसी तरफ को चल पड़े।

ताज्जुब में पड़ा हुआ वह कैदी अभी सोच ही रहा था कि ये बात करने वाले कौन हो सकते हैं और उनका क्या इरादा है, कि उसे अपने बगल की तरफ एक खटके की आवाज सुनाई पड़ी और साथ ही किसी ने पुकारा—"गौतम, गौतम, जल्दी उठो!" कैदी चमक कर बोल उठा, "यह क्या मैं गुरुजी की आवाज सुन

रहा हूं ?'' शेरसिंह ने जवाब दिया, ''हां और मैं तुमको छुड़ाने आया हूं, मगर जल्दी, वक्त बहुत कम है, लो मेरा हाथ पकड़ो और चुपचाप चले आओ, लाचार हूं कि रोशनी नहीं कर सकता।''

राजा गोपालसिंह बने हुए गौतम ऐयार ने शेरसिंह का हाथ पकड़ लिया और उठ खड़ा हुआ। अंधेरे ही में उसे सीढ़ियाँ तय करनी पड़ीं और तब एक तंग रास्ते को पार कर वह एक ऐसी जगह पहुँचा जो इससे पहिले कभी उसने देखी न थी। यहाँ एक मोमबत्ती की रोशनी हो रही थी जिसमें उसने राजा गोपालसिंह को देखा और चौंक कर बोल उठा, ''हैं, राजा साहब !!'' जवाब में शेरसिंह ने हँस कर कहा, ''हाँ ये राजा साहब ही तुम्हें कैद से छुड़ाने और अपनी ठीक जगह लेने आये हैं।'' गोपालसिंह ने गौतम की बाँह पकड़ ली और तब प्रेम से उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, ''गौतम, तुम्हारी सूरत बता रही है कि तुम्हें इस कैद में किस तरह की तकलीफें दी गईं और किस तरह के दिन और रात काटने पड़े ! अफसोस इतना ही है कि इस वक्त हम लोगों के पास इतना वक्त नहीं है कि मैं तुम्हारे आगे अपनी शुक्रगुजारी का बयान करके तुमसे उन दुःखों की माफी माँग सकूं जो मेरी वजह से तुमको उठाने पड़े हैं, मगर इसे मैं किसी दूसरे वक्त के लिए रखता हूँ और उसी वक्त तुम्हें इसका पूरा इनाम भी दूँगा, इस समय तुम वह बात सुनो जो तुम्हारे गुरुजी तुमसे कहा चाहते हैं।''

गौतम यह सुन शेरसिंह की तरफ घूमा मगर उन्होंने कहा, ''नहीं राजा साहब पहिले मैं आपको गौतम की ही तरह का कैदी और बीमार सूरत वाला बना कर उस जगह बन्द कर लूँ तब इससे बातें करूँगा, न जाने कब कौन आ जाय और हमलोगों के हाथ का यह बहुत अच्छा मौका जाता रहे। आइये, इस जगह बैठ जाइये, और मेरी कारीगरी देखिये।''

गोपालसिंह को अपने सामने बैठा कर शेरसिंह ने गौतम को भी बैठने को कहा और तब अपने ऐयारी के बटुए में से कूँची और रंग निकाल उनकी सूरत बदलने लगे।

एक घड़ी से भी कम ही वक्त इस काम में बिता शेरसिंह ने कुछ पीछे हट बड़े गौर से गोपालसिंह की सूरत देखी और तब बटुए से शीशा निकाल उनके हाथ में देते हुए ''कहा, देखिए, सूरत ठीक बनी ?'' गोपालसिंह ने शीशा देखा और साथ ही हँस कर बोल उठे, ''अरे, यह क्या मैं ही हूँ !''

यकायक शेरसिंह के तेज कानों में किसी खटके की आवाज पड़ी और वे चमक

कर बोले, ''कोई आता है राजा साहब, जल्दी कीजिए और गौतम के फटे कपड़े पहिन कर इसकी जगह पर जा लेटिए। गौतम को जो कुछ करना है वह मैं इसे बाद में समझा दूँगा। एक बात खयाल रखियेगा, आपकी सूरत पर जो रंग मैंने लगाया है वह पक्का है और जब तक आप उसे केले के अर्क से न धोइयेगा छूटेगा नहीं। अब यह आपकी इच्छा पर है कि जब तक मुनासिब समझें इस कैदियों वाली शक्ल और हालत में रहिये, मगर जब तक भी आप वैसे रहें अपनी चाल ढाल भी वैसी ही बनाए रहिएगा जैसी पाँच बरस के मुसीबतजदे कैदी की रहनी चाहिए।''

पुनः खटके की आवाज आई और शेरसिंह ने फुर्ती से वह मोमबत्ती गुल कर दी। अंधेरे ही में गोपालसिंह ने अपने कपड़े उतार गौतम के फटे कपड़े पहिने और ऊपर वाली कोठरी में पहुँच उसी के कम्बल पर जा लेटे। शेरसिंह ने अपने पीछे वाला रास्ता बन्द कर लिया और गौतम का हाथ पकड़े किसी दूसरी तरफ को निकल गए।

गोपालसिंह उस बदबूदार कम्बल पर ठीक तरह से लेटे भी न होंगे कि जंगले के बाहर किसी तरह की आहट सुनने में आई और कुछ ही देर बाद एक लालटेन की रोशनी दिखाई पड़ी। उन्हें खयाल हुआ कि तेजसिंह या कमलिनी में से कोई या शायद दोनों ही होंगे, परन्तु जिस पर उनकी निगाह पड़ी उसे देखते ही उनकी आँखें क्रोध से लाल हो उठीं। वह मायारानी थी और उसके साथ ही हाथ में लालटेन लिये औरत रूपधारी कम्बख्त धनपत। यद्यपि उन्होंने अपने को बहुत सम्हाला फिर भी सब्र न कर सके और उठ कर लाल आँखों से उन दोनों की तरफ देखने लगे।

यही मौका था जिसका हाल हम चन्द्रकान्ता सन्तति के आठवें भाग के पहिले बयान में लिख आए हैं, जब मायारानी अपने कैदी को मारने के लिए तीर कमान लेकर वहाँ गई थी और नाकामयाब होकर लौटने बाद बिहारी और हरनाम को साथ लेकर जाने पर उसे गायब पाया तथा तेजसिंह की यह बात सुनी थी—''बेशक मायारानी की मौत आ गई !''

पाठकों को बताना नहीं होगा कि वे असली गोपालसिंह ही थे जिन्हें तेजसिंह ने कैद से छुड़ाया और जिन्होंने इन्द्रजीतसिंह के पूछने पर कहा था कि—'तेजसिंह से यह सुन कर कि कम्बख्त मायारानी ने राजा बीरेन्द्रसिंह और रानी चन्द्रकान्ता को कहीं कैद कर दिया है मैं उन्हें साथ लिए हुए फिर उसी तिलिस्मी

बाग में चला गया और जहाँ जहाँ मैं जा सकता था जाकर अच्छी तरह पता लगा कर समझ गया कि यह बात एक दम झूठी है और आप लोगों को धोखा देने के लिए उसने अपने ही दो आदमियों को उनकी सूरतों में रंग कर कैद कर रक्खा है'—आदि* ।

इसके बाद जो जो हुआ या राजा गोपालसिंह ने जो कुछ किया हमारे पाठक चन्द्रकान्ता सन्तति में अच्छी तरह पढ़ चुके हैं और उन्हें वे काम भी याद होंगे जो 'कृष्णाजिन्न' की सूरत में गोपालसिंह ने किए थे, अस्तु हम इसके तुरन्त बाद का हाल न लिख अब उस समय से अपना किस्सा शुरू करेंगे जब का हाल कि हमारे पाठकों की निगाह के सामने अभी तक आया नहीं है ।

आठवां बयान

लटिया पहाड़ी वाले उसी महाकाल के मन्दिर में जिसमें आज से पहले भी कई दफे हमारे पाठक जा चुके हैं आज हम पुनः उनको ले चलते हैं ।

मन्दिर के सामने वाले सभामण्डप में इस समय दो आदमी मौजूद हैं जिनकी आकृति तथा रंग ढंग से पता लगता है कि कहीं बहुत दूर से चल फिर कर आए हैं और इस जगह बैठ अपनी थकावट दूर कर रहे हैं । वह देखिए मोटे खम्भे का सहारा लिए और दोनों पैर सामने किए अपने ही हाथों से उन्हें दबाती हुई जमानिया की रानी या अब मायारानी लक्ष्मीदेवी हैं और उनके सामने अपने दोनों पैर नीचे लटकाए बैठे हुए राजा गोपालसिंह हैं । मगर ऐसे समय में अपने घर और राज्य से दूर इस स्थान में ये दोनों एक दम अकेले और बिना किसी सरो-सामान या साथी के इस तरह पर क्यों दिखाई दे रहे हैं! आइये शायद इनकी बातें सुनने से कुछ पता चले ।

पैर के अंगूठे और उँगलियों को दोनों हाथों से दबाती हुई लक्ष्मीदेवी बोलीं–

लक्ष्मी० । इन दो दिनों में आपने मुझको बेतरह दौड़ाया, इतना मैं उम्र भर में कभी चली न होऊंगी । ओफ, पैर दुखने लगे ।

गोपाल० । (हँस कर) जब तारा बनी नौगढ़ जमानिया और रोहतासगढ़ की खाक छाना करती थीं क्या तब भी नहीं !

लक्ष्मी० । ओफ, उन दिनों की याद न दिलाइए । वह मेरे मुसीबत के दिन थे और अगर उन दिनों इतना घूमा फिरा न करती तो सच कहती हूँ कि पागल

* देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति आठवाँ भाग, छठवाँ बयान ।

हो जाती । ईश्वर भला करे इन्द्रदेव का जिन्होंने मुझे ऐयारी सिखा के स्वतन्त्रता के साथ घूमने की इजाजत दे दी, नहीं तो अगर मुझे कभी घर में बैठे रह कर अपने दिन काटने पड़ते तो सचमुच अपनी जान दे देती । मैं कमलिनी का उपकार भी किसी तरह नहीं भूल सकती हूँ जिसने मेरा असल भेद कुछ न जानते हुए भी केवल इन्द्रदेव के कहने से मुझको अपनी सगी बहिन से बढ़ कर माना और उसी तरह से रक्खा । (रुक कर) परसों सुबह जमानिया से चलते समय जब आपने मुझसे कहा कि कमलिनी वगैरह को साथ नहीं लेंगे, तो पल भर के लिए मुझे यही खयाल हुआ कि आप उससे कपट करने जा रहे हैं जिसने मुझ पर कभी इतना बड़ा अहसान किया था........

गोपाल० । (हँस कर) मगर अब ?

लक्ष्मी० । अब मैं समझ गई कि आपने ऐसा क्यों कहा था ।

गोपाल० । अच्छा क्या समझीं, बताओ तो !

लक्ष्मी० । मैंने प्रभाकरसिंह और इन्दु तथा मालती के साथ जाकर उन्हें तिलिस्म से जो दौलत और सौगातें मिलीं उनको भी देखा, और इन्द्रजीत आनन्द तथा कमलिनी लाडिली के साथ जाकर उन्हें मिलने वाली दौलत और सौगातें भी देखीं मगर........

गोपाल० । (मुस्कुराते हुए) मगर ?

लक्ष्मी० । बुरा न मानिए तो मैं कहूँ ?

गोपाल० । अच्छा न मानूँगा, कहो ।

लक्ष्मी० । जो कुछ आपको इस तिलिस्म के अन्दर से मिला उसके सामने वह एक पासँग भी न था । ओह, सूर्य मण्डल की वे चीजें, वे गहने और जवाहिरात, वे नायाब करिश्मे, वे हथियार, वे तिलिस्मी जिरःबख्तर, बर्तन चौकियाँ पलंग और कुर्सियाँ, सिंहासन और सवारियाँ, क्या मुकाबला इनका उन चीजों से जो और लोगों को मिलीं ? औरों की तो मैं नहीं कह सकती पर कमलिनी या लाडिली अगर उनको देखतीं तो सचमुच आपसे जरूर लड़तीं और कहतीं कि "जीजाजी आपने हमलोगों को ठग लिया, ये इतनी नायाब चीजें आपको हजम न होंगी, इनमें से आधा सामान हमें दे दीजिए !"

गोपाल० । (हँस कर) नहीं ऐसा तो न कहतीं, कमलिनी बड़े ऊँचे दिल की औरत है और लाडिली भी वैसे ही है, पर मन में उनके कुछ खयाल जरूर होता और इसी से मैंने सिर्फ तुम्हें ही इन चीजों को दिखाना पसन्द किया ।

लक्ष्मी० । मैं समझती हूँ कि इसी सामान की बदौलत आपने कृष्णाजिन्न का रूप भरा होगा ?

गोपाल० । हाँ, और वह तो था ही क्या उससे भी बढ़ कर चीजें और सामान वहाँ मेरे वास्ते रक्खा है, और सच तो यह है कि इस तिलिस्म में जितना सामान है उसको रखने की जगह भी यहीं है । तुम्हीं कहो जमानिया महल में इसमें से कितना ले जाकर रक्खा जा सकता है ?

लक्ष्मी० । अजी राम कहिए ! और फिर आप कहते हैं कि अभी उन जगहों में जहाँ का तिलिस्म पूरी तरह से टूटा नहीं है या जहाँ आप अभी लौट के नहीं जा सकते—इसलिए कि इस तिलिस्म के चौथे दर्जे की ताली आपके पास नहीं है, और भी कितना ही सामान पड़ा हुआ है जो इससे भी बढ़ कर है ।

गोपाल० । बेशक ऐसा ही है, और सबसे अद्भुत चीज जो तुम अगर वहाँ चल सकती तो देखतीं, वह था मेरा विमान पक्षिराज' जो आकाश की सैर कराता है।

लक्ष्मी० । उसको न देख पाने का मुझे सचमुच बहुत अफसोस है ! पर आपके मुँह से बार बार सुन के भी मुझको यकीन नहीं होता, क्या सचमुच वह हवा में उड़ सकता था ?

गोपाल० । बिलकुल सच ऐसा ही था, और तुर्रा यह कि उसकी परछाईं कहीं नहीं पड़ती थी, जहाँ तक मैं समझता हूँ कि नीचे के लोगों को वह दिखाई भी न पड़ता होगा ?

लक्ष्मी० । (हसरत भरी निगाहों से सामने का धूप गर्द और धूल से भरा कोसों का मैदान देखती हुई) इस समय होता तो हम लोग उसी पर न चलते ! मगर यह तो कहिये कि आप घुमाते फिराते मुझको इस बियाबान में क्यों ले आए जहाँ एक सवारी का इन्तजाम तक दिखाई नहीं पड़ता ?

गोपाल० । (हँस कर) नहीं नहीं, सो मत डरो, तुम्हें पैदल न चलना पड़ेगा, और पैदल चली ही तुम कहाँ, जहाँ तक बन पड़ा सवारियों पर ही तो तुम्हें घुमाया है ।

लक्ष्मी० । (मुँह बनाते हुए) कमरे कोठरियाँ दालान तहखाने छतें और मंजिलें चढ़ते उतरते तो मेरी कमर रह गई और ये कहते हैं पैदल कहाँ घुमाया !

गोपाल० । (हँसते हुए) सो तुमने अपनी धरोहर सम्हालने के लिए किया । इसमें क्या है ? यहाँ क्या है ? तुम्हीं पूछती और घूमती रहती थीं, फिर थक गईं तो मेरा क्या कसूर ! मगर यहाँ मैं तुम्हें एक दूसरे ही मतलब से लाया हूँ ।

लक्ष्मी० । वह क्या ?

गोपाल० । (उँगली से दिखा कर) देखो वह जो टूटा फूटा मकान दिखाई पड़ता है, वही है वह मठ जिसमें पुजारीजी रहा करते थे और जो 'रोहतासमठ' कहलाता है ।

लक्ष्मी० । अच्छा ! वही रोहतासमठ है ! अच्छा शिवगढ़ी कौन और कहाँ है ?

गोपाल० । (हाथ से अपने नीचे की तरफ दिखा कर) वह जगह शिवगढ़ी कहलाती है । पहिले इसके चारो तरफ बहुत मोटी और मजबूत दीवारें थीं पर अब सब गिर गई हैं और इमारत भी बहुत कुछ नष्ट भ्रष्ट हो गई है ।

लक्ष्मीदेवी यह सुन कुछ सोचने लगीं जिसे देख गोपालसिंह ने कहा, "यहीं कम्बख्त धनपत अपना खजाना रक्खा करता था, हरामजादी मुन्दर ने जो कुछ मेरे महल और तिलिस्म में से निकाल कर उसको दिया सो सब भी इसी जगह रखता था और सब अभी तक यहीं मौजूद है । शायद तुम उसे देखना चाहो इसी खयाल से तुमको यहाँ ले आया हूँ ।

लक्ष्मी० । (मुँह फेर और नफरत से थूक कर) राम राम राम ! आप भी कैसे आदमी हैं ! अच्छा एक बात कहूँ, आप मानियेगा ?

गोपाल० । कहो ।

लक्ष्मी० । उन सबको आग लगा कर फूँक दीजिये !

गोपाल० । (गम्भीरता से) सचमुच यही करना चाहिये ।

लक्ष्मी० । अच्छा हाँ, मैं कई दफे पूछना चाहती थी पर संकोच के मारे रह गई, यह धनपत था कौन आखिर ?

गोपाल० । मनोरमा का भांजा था और नन्हों का भी कोई लगता था ।

लक्ष्मी० । और आपने उसके साथ क्या किया ?

गोपाल० । तिलिस्म में डाल दिया जहाँ उम्मीद है मर गया होगा ।

"नहीं, मरा नहीं जीता है, और उसने आपके लिए एक नया फसाद खड़ा कर दिया है ।" यह आवाज मन्दिर के पीछे की तरफ से आई और इसके बाद ही शेरसिंह की सूरत दिखाई पड़ी, जिन्हें देखते ही लक्ष्मीदेवी तो कायदे से हो गईं और गोपालसिंह बोल उठे, "आइये आइये शेरसिंहजी, आप रहे कहाँ मुद्दतों से ? और तो और कोई चीठी पुर्जा तक न भेजा कि कहाँ हैं या क्या कर रहे हैं ! भूतनाथ आपके लिए बेहद परेशान है ।

शेर० । मुझे मालूम है, मगर मैं एक बड़े ही जरूरी काम में लगा हुआ था ।

लक्ष्मी० । जो ऐसा था कि बरसों से सूरत तक न दिखला सके ।

शेर० । जी हाँ आप उसे ऐसा ही समझें ।

गोपाल० । अच्छा आइये बैठ जाइये और सबसे पहिले यह बताइये कि वह कौन सा फसाद है जो मेरे लिए घनपत ने खड़ा कर दिया है ?

शेर० । कैसे क्या हुआ सो तो मैं नहीं कह सकता पर वह दारोगा को आपकी कैद से छुड़ा कर निकाल ले गया ।

गोपालसिंह और लक्ष्मीदेवी दोनों ही के मुँह से अचानक निकल गया, "हैं, दारोगा को छुड़ा कर ले गया !" तब सम्हल कर गोपालसिंह बोले, "मगर ऐसा हो नहीं सकता, उस हरामजादे को तो मैंने ऐसी जगह बन्द किया था कि जहाँ से वह किसी तरह निकल ही नहीं सकता था ।"

शेर० । फिर भी निकल ही गया और ऐसे मौके पर जब कि उससे बहुत बड़ा काम निकलने की उम्मीद थी ।

गोपाल० । वह क्या ?

शेर० । सो भी मैं बताता हूँ ।

लक्ष्मी० । (डरी हुई आवाज में) पहिले दारोगा के बारे में कुछ सोच लेना न मुनासिब होगा ! अगर आपका कहना सही है और वह सचमुच छूट कर स्वतन्त्र हो गया है तो जरूर बड़ा भारी बखेड़ा खड़ा करेगा !

गोपाल० । जरूर करेगा, फिर भी तुम डरो या घबराओ नहीं और अपनी सूरत ऐसी उदास भी न बना लो ! वह पाजी अगर छूट भी गया तो हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकता उलटा अपनी ही जान बचाने की फिक्र करेगा, मेरे सामने आने की हिम्मत उसकी न पड़ेगी ।

लक्ष्मी० । शायद आपके बाकी कैदियों को भी छुड़ावे और अपना गिरोह बढ़ा ले ?

गोपाल० । हाँ यह डर जरूर हो सकता है और इसके लिए मैं सावधान रहूँगा, मगर (शेरसिंह से) आप क्या कह रहे थे ? क्या काम आपको उससे निकलने की उम्मीद थी ?

शेर० । चक्रव्यूह वाले तिलिस्म के चौथे दर्जे की ताली उसके पास थी ।

गोपालसिंह और लक्ष्मीदेवी इतना सुनते ही उछल पड़े और गोपालसिंह ने उनका हाथ पकड़ कर कहा, "जल्दी कहिये, क्या आपको उस ताली की कोई खबर मिली है ?"

शेर० । जी हाँ, तीन बरस की लगातार मेहनत के बाद मैं उस चीज का पता

लगाने में समर्थ हुआ, पर अफसोस, अब उसके पाने की आशा तक भी जाती रही ।

गोपाल० । सो कैसे ? आखिर कुछ कहिए भी तो ! कहाँ थी वह चीज और कहाँ गई अब ?

शेर० । (कुछ रुक कर) वह दारोगा ही के पास थी और उसी के साथ चली भी गई ।

गोपाल० । आप तो उलझन पर उलझनें डालते जा रहे हैं । क्या आपका मतलब यह है कि चक्रव्यूह के चौथे दर्जे की ताली इतने दिनों तक कम्बख्त दारोगा के ही पास थी ?

शेर० । जी हाँ ।

गोपाल० । इस बात का पता आपको क्योंकर लगा ?

शेर० । इसी का पता लगाने में इतना जमाना गुजर गया और जब पता लगा भी तो अचानक ही ।

गोपाल० । कहाँ और कैसे ?

शेर० । आपसे मैंने श्रीविलास का हाल कहा था ।

लक्ष्मी० । कौन श्रीविलास ? क्या वही कामेश्वर वाला ?

शेर० । हाँ, उनका चचेरा भाई, चंचल सेठ का भतीजा ।

गोपाल० । जी हाँ, आपने कहा था और जो कुछ कहा था मुझे अब तक याद भी है । आखिरी बात जो उसके बारे में आपने कही वह यह थी कि एक दिन इसी जगह, इसी महाकाल के मन्दिर में, वह और शिवदत्त आये थे*........

शेर० । और इसके बाद का हाल कुछ नहीं कहा ?

गोपाल० । कुछ नहीं, मगर मैं अपनी तरफ से जानता हूँ कि उसकी कम्बख्त सुन्दर से कुछ लाग साँट थी और दारोगा के हुक्म से हरनामसिंह ने उसका खून कर डाला, जो एक तरह पर अच्छा ही हुआ ।

शेर० । तब आपको उसका पूरा हाल नहीं मालूम हुआ । हरनामसिंह के हाथों वह सख्त जख्मी जरूर हुआ मगर भाग्यवश उसी वक्त मैं वहाँ पहुँच गया और उसकी हालत देख उसे एक हिफाजत की जगह ले गया† । महीनों उसका

* देखिये रोहतासमठ तीसरा भाग, सातवाँ बयान ।

† देखिए रोहतासमठ चौथा भाग, दूसरा बयान । पाठक अब समझ गये होंगे कि श्रीविलास को उठा ले जाने वाले शेरसिंह और मैना ही थे ।

इलाज किया तब जाकर कहीं उसे आराम हुआ। उस समय मैना भी मेरे साथ थी और हम लोग जमानिया तिलिस्म से लौटे चले आ रहे थे।

गोपाल०। और अब वह कहाँ है?

शेर०। (ऊपर की तरफ उँगली उठा कर) भगवान के पास। यद्यपि मैंने उसे सब तरह का आराम दे रखा था पर कैदी तो फिर भी वह था ही जो उसको पसन्द न आया। उसने छूट कर भागने की कोशिश की और मकान की छत से उतरती समय कमन्द से फिसल गिर कर मर गया। मरते वक्त उसने मुझको बताया कि चक्रव्यूह के चौथे दर्जे की ताली दारोगा के पास है और यह खबर पाते ही मैं आपको सुनाने जमानिया दौड़ा, पर महल में जाने पर पता लगा कि आप हैं नहीं, दो रोज से रानी साहबा के साथ तिलिस्म में गए हुए हैं, साथ ही यह भी सुना कि दारोगा भाग निकला, अस्तु घबराया हुआ सब तरफ आपको खोजता यहाँ चला आ रहा हूँ।

गोपाल०। श्रीविलास को यह बात कैसे मालूम हुई?

शेर०। जब तक मैं पूरा हाल न कहूँगा आप कुछ ठीक ठीक समझ न सकेंगे, अस्तु मैं बहुत ही मुख्तसर में वे सब बातें कह जाता हूँ जिन्हें पिछले दो ढाई बरसों की दौड़ धूप और मेहनत के बाद मैं जान सका।

गोपाल०। हाँ कुछ कहिए तो मुझे भी पता लगे।

शेर०। भैयाराजा ने एक तिलिस्मी किताब आपको दी थी जिसकी मदद से आपको अजायबघर वाले तिलिस्म का हाल मालूम हुआ था।

गोपाल०। जी हाँ, उसको मैं अजायबघर की चाभी कहता था और मुझे कैद कर लेने पर वह उन्हीं कम्बख्तों के हाथ लग गई जिन्होंने मेरी जिन्दगी बर्बाद की।

शेर०। जी हाँ, वह मुन्दर को मिली और उससे दारोगा ने ले ली। दारोगा से उसे शिवदत्त के ऐयार चुरा ले गए। आपको मैं वह किस्सा सुना चुका हूँ कि किस तरह से रिक्तगन्थ मेरे पास से चोरी होकर शिवदत्त के पास गया और उसको गहरा धोखा देकर अजायबघर की ताली के साथ साथ रिक्तगन्थ को भी मेरा शागिर्द ले भागा*।

गोपाल०। जी हाँ आपने कहा था मगर उसी वक्त आपने यह भी कहा था कि सुरङ्ग में ही आपकी सूरत बना हुआ मनोरमा का ऐयार साधोराम आपके

* देखिये रोहतासमठ पाँचवाँ भाग तीसरा बयान, और छठवाँ भाग दूसरा बयान।

शागिर्द से वे दोनों चीजें ले गया।

शेर०। जी हाँ, साधोराम उन्हें ले रोहतासगढ़ के तहखाने में घुसा मगर वहाँ उस समय तक तेजसिंह की हुकूमत फैल चुकी थी। उसको अपने पकड़े जाने का अंदेशा हुआ और वह रिक्तगन्थ को चौबीस नम्बर की कोठरी में बन्द कर वहाँ से निकल भागा।

गोपाल०। हाँ, और उस कोठरी की ताली नानक को मिली जिससे लेकर कमलिनी ने उस कोठरी से रिक्तगन्थ निकाला और इन्द्रजीतसिंह को दिया। मगर अजायबघर की ताली का क्या हुआ फिर?

शेर०। उसे धनपत ने उड़ा लिया जो मुन्दर के काम से उन दिनों रोहतासगढ़ में घुसी हुई थी। धनपत ने वह ताली ले जाकर मायारानी को दी और उसने इतना छिपा कर उस चीज को अपने पास रक्खा कि दारोगा तक को भी उसकी कुछ खबर न हुई।

गोपाल०। ठीक है, अच्छा तब?

शेर०। दारोगा के पास दो चीजें थीं जिनकी मदद से वह जब चाहे तब और जिस तिलिस्म में चाहे उसमें जा सकता था। एक तो यही अजायबघर वाली ताली यानी वह किताब और दूसरी एक ऐसी चीज जो तिलिस्म के सब तालों और दर्वाजों को सिर्फ छू देने मात्र से खोल सकती थी।

गोपाल०। छू देने मात्र से ताले खोल देती थी?

शेर०। जी हाँ, दारोगा के पास से अजायबघर वाली किताब यद्यपि शिवदत्त के ही ऐयार ले गये मगर उसे पता न लगा कि किसकी यह कार्रवाई थी, फिर भी वह डर बेतरह गया और उसे यह आशंका हुई कि इसी तरह कहीं वह दूसरी ताली भी किसी दिन कब्जे से निकल न जाय। अस्तु उसने उसे ऐसी जगह छिपा दिया जहाँ वह किसी भी गैर को मिल न सकती थी। श्रीविलास ने यह ताली एक बार उसके पास देखी थी और बाद में यह भी सुना था कि वह उसे किसी बहुत ही गुप्त जगह में छिपा चुका है। मरते वक्त इतनी बात वह मुझको बताता गया।

गोपाल०। मगर यह तो बड़े ताज्जुब की बात आप कहते हैं! इसका मतलब यह हुआ कि दारोगा अब भी जिस तिलिस्म में चाहे घुस सकता है?

शेर०। बेशक, और खास कर चक्रव्यूह के चौथे दर्जे में।

गोपाल०। अस्तु जब तक वह पकड़ा नहीं जाता, मैं तिलिस्म का चौथा

दर्जा खोल भी नहीं सकता ?

शेर० । कैसे खोल सकते हैं !

लक्ष्मी० । तो सबसे पहले उसी को पकड़ना लाजिम है ?

गोपाल० । जिसकी सम्भावना बहुत कम है, क्योंकि वह मेरे सामने आवेगा कभी नहीं, और फिर आप कहते हैं कि कम्बख्त धनपत भी उसके साथ है ?

शेर० । जी हाँ, आपके महल में जाते ही आपके ऐयारों के सरदार गौतम ने यह बात मुझसे कही और आपका पता लगा कर आपको फौरन खबर देने को कहा, सुनते ही मैं दौड़ा और यहाँ आपको पा रहा हूँ ।

लक्ष्मी० । वह तालो है क्या और कैसी ? क्या अजायबघर वाली की तरह वह भी कोई किताब है ?

शेर० । जी नहीं वह एक सचमुच की ताली है, पन्ने की बनी हुई, और उसकी शक्ल कुछ कुछ इस तरह की है ।

शेरसिंह ने अपना गला खोल कर वह ताली दिखाई जो उनके गुरु महाराज उनके वास्ते रख गये थे और बूआजी के जरिये उन्हें मिली थी या जिसे वे हरदम अपने गले में पहिने रहा करते थे* । गोपालसिंह ने बड़े गौर और ताज्जुब से इस ताली को देखा और तब पूछा, "श्रीविलास ही ने आपसे यह भी कहा होगा कि वह दूसरी ताली ऐसी ही थी ?"

शेर० । जी नहीं, यह मुझसे बूआजी ने कहा, और उनको पुजारीजी ने बताया था ।

गोपाल० । यह कब की बात है ? मुझसे तो ऐसा उन्होंने कभी कहा नहीं !

शेर० । हाँ पहिले उन्हें यह बात मालूम न थी ।

गोपाल० । तो क्या आप इधर हाल में कभी उनसे मिले हैं ?

शेर० । जी हाँ, सिर्फ दो रोज हुआ ।

गोपाल० । दो रोज हुए ! कहाँ हैं वे, और इधर कई बरसों से कहाँ गायब रहीं ? मुझसे उनकी आखिरी मुलाकात बस उस समय हुई थी जब उस दीवानखाने में उन्होंने मुझे यह कह कर आपके साथ बिदा किया था कि मैं तिलिस्म में घुसूंगी और पुजारीजी से मिलने का उद्योग करूंगी । बस उस दिन के बाद मुझे

---

* देखिए रोहतासमठ तीसरा भाग, तीसरा बयान ।

उनके दर्शन नहीं हुए, यद्यपि मैं घबरा कर कई कई बार तिलिस्म में घुसा और जहाँ जहाँ जा सकता था वहाँ वहाँ जाकर बहुतेरा उन्हें खोज हारा ।

शेर० । वही बात मेरे साथ भी हुई और मैं भी कितनी ही बार तिलिस्म में उनको खोज और न पा के तरह तरह की बातें सोचता रहता था, पर परसों उनकी भेजी हुई मैना मुझे मिली और उनका हाल कह कर मुझको उनके पास ले गई ।

गोपाल० । अच्छा ! जल्दी कहिये वे कहाँ थीं अब तक और कैसी हैं ? चाचाजी कैसे हैं ? पुजारीजो किस तरह हैं ?

शेर० । इस समय तो सब लोग बहुत अच्छी तरह हैं पर जब की यह बात है उस समय पुजारीजी अचानक बहुत ज्यादे बीमार हो गये, यहाँ तक कि उनके बचने की कोई आशा न रह गई, और वे उन्हीं की सेवा के लिए रुक गई थीं ।

गोपाल० । वे तो जब चाहें आ जा सकती थीं, मुझे खबर करतीं तो मैं सब तरह का सामान उनके पास पहुँचाता और दवा इलाज का भी प्रबन्ध करता !

शेर० । उस समय कोशिश करके भी न तो वे खुद हो बाहर निकल सकीं और न कोई सन्देशा ही भेजवा सकीं ।

गोपाल० । तो अब मैना कैसे बाहर आई ?

शेर० । इसका भी ताज्जुब उन्हें बना ही हुआ है मगर उनका ख्याल है और मैं भी ऐसा ही सोचता हूँ कि इस मामले में आपके दारोगा साहब का ही कुछ हाथ है जिन्होंने कुछ कार्रवाई ऐसी कर दी थी कि कोई न तो बाहर से उन लोगों के पास जा सकता था और न तिलिस्म के अन्दर का कोई बाहर निकल सकता था ।

गोपाल० । और अब ?

शेर० । अब भी शायद उसी ने कुछ किया जिससे वह रुकावट दूर हो गई ।

गोपाल० । लेकिन अगर यह बात सही है तो कहना होगा कि इस समय तिलिस्म की कुँजी उसी कम्बख्त के हाथ में है और वह जो चाहे सो कर सकता है !

शेर० । बेशक यही बात है और इसीलिए मेरी राय है कि जल्दी से जल्दी एक बार आपको लौट कर अपने महल में चलना और मुनासिब इन्तजाम कर लेना चाहिए । इसके बाद हम लोग पुनः तिलिस्म में घुसें और अच्छी तरह देख भाल करके उन दोनों को खोज निकालने की कोशिश करें । अगर वे दोनों दुष्ट तब तक तिलिस्म के अन्दर ही होंगे तो पता लगा लेना ज्यादा मुश्किल न होगा ।

गोपाल० । मैं अभी चलने को तैयार हूँ मगर दो एक बातें और बता दीजिये । एक तो यह है कि धनपत का हाल गौतम को कैसे मालूम हुआ ? और दूसरे यह कि

अब आप या हमलोग पुनः मैना या बूआजी से भेंट कर सकते हैं कि नहीं ?

शेर० । बूआजी ने धनपत को तिलिस्म के बाहर निकलते हुए देखा और उसका पीछा किया । उस समय उन्हें मालूम हुआ कि अब तिलिस्म के वे सभी दर्वाजे खुल सकते हैं जो पहिले नहीं खुल पाते थे । धनपत तो उनके हाथ से निकल गया मगर उन्होंने उसी समय मैना को बाहर निकाल कर मुझसे या आपसे मिलने और यह बात बताने को कहा । मैं गौतम द्वारा यह सुन कर कि दारोगा कैद से निकल भागा है यह खबर देने के लिए आपको ढूंढ़ता जब तिलिस्म में घूम रहा था तो यकायक मैना मुझे दिख गई और उसने मुझे यह बात बताई जिस पर मुझको खयाल हुआ कि जरूर धनपत ही ने किसी तरह दारोगा को छुड़ाया है और अब जरूर दोनों शैतान कोई भारी कार्रवाई करने का बाँधनूँ बाँध रहे होंगे।

गोपाल० । जरूर ऐसा ही होगा, अच्छा अब आप क्या पुनः बूआजी से मिल सकते हैं ?

लक्ष्मी० । और मैना अब कहाँ है ?

शेर० । मैं इस बारे में कुछ नहीं कह सकता, मैना मुझे यह सन्देशा देकर तुरन्त ही फिर बूआजी के पास लौट गई और मैं आपकी खोज में चल पड़ा । खैर जो कुछ होगा देखा जायगा, आप पहिले एक बार अपने महल में तो चलिये ।

गोपाल० । अच्छी बात है, उठिये तब, क्योंकि फिर नीचे चलना पड़ेगा, वहीं सवारी मिलेगी ।

'जी हाँ' कह कर शेरसिंह उठे और राजा गोपालसिंह तथा लक्ष्मीदेवी भी उठ खड़ी हुई । शेरसिंह ने सभामण्डप के नीचे जाने का रास्ता खोला और तीनों आदमी नीचे पहुँचे जहाँ से डोल में बैठ कर सब लोग उस कमरे में पहुँच गए जहाँ सब जगह ले जाने के लिए चौकियाँ रक्खी रहती थीं* । हम इस रास्ते और इन चौकियों का हाल पहिले बहुत खुलासे तौर पर लिख आये हैं इसलिए इस जगह उन सब बातों के बारे में कुछ न लिख कर सिर्फ मतलब की बातें बयान करते हैं । राजा गोपालसिंह लक्ष्मीदेवी और शेरसिंह एक चौकी पर बैठ गये और खटका दबाने के साथ ही वह चल कर एक तरफ दीवार के अन्दर घुस गई ।

काफी समय तक चल कर जब वह चौकी रुकी तो शेरसिंह ने अपने तिलिस्मी खंजर से रोशनी की और सब लोग उस पर से उतर पड़े । उनके उतरते ही चौकी तो पुनः पीछे को लौट गई और लक्ष्मीदेवी ने अपने को अजायबघर की

* देखिये रोहतासमठ तीसरा भाग, नौवाँ बयान ।

ड्योढ़ी में पाया जिससे चौंक कर वह राजा गोपालसिंह से बोली, "आप जमानिया महल में न जाकर यहाँ क्यों आ गये ?"

गोपालसिंह ने जवाब दिया, "मैं एक बार कोशिश करके देख लेना चाहता हूँ कि बूआजी चाचाजी या पुजारीजी से भेंट हो सकती है या नहीं ? क्योंकि आखिरी दफे मैं उन सभों को यहाँ ही छोड़ गया था । (शेरसिंह से) मैना ने आपको कहाँ ले जाकर बूआजी से भेंट कराई थी ?" शेरसिंह ने जवाब दिया, "मैं तो एक दूसरी ही जगह—उस बंदरों वाले बंगले में—था जब मैना से भेंट हुई, इससे ठीक तो नहीं कह सकता पर मेरा अनुमान है कि वे सब लोग उसी जगह हैं जहाँ आप उन्हें छोड़ गये थे ।" गोपालसिंह ने गर्दन हिलाई और आगे बढ़े ।

इसके थोड़ी ही देर बाद हम तीनों आदमियों को उस बड़े फाटक के सामने देखते हैं जिसके सामने पुतली लटकती रहती थी । इस समय भी यहाँ की हालत ठीक वैसी ही है जैसी कई दफा पहिले हमारे पाठक देख चुके हैं सिवाय इसके कि अब उस पुतली के हाथ में किताब या ताली नहीं है ।

राजा गोपालसिंह ने शेरसिंह से कुछ सलाह की और आगे बढ़ कर पुतली के पास पहुँचे । करीब ही था कि वह हाथ बढ़ा कर कुछ करते कि यकायक कहीं से आवाज आई—"ठहरिए !" जिससे वे चमके और रुक गए । उसी समय एक कोठरी का दर्वाजा खुला और मैना ने बाहर झांक कर कहा, "जल्दी इधर चले आइए और रोशनी गुल कर दीजिए, वहाँ खतरा है ।" इसके बाद उसने शेरसिंह से कुछ इशारा किया और कोठरी के भीतर चली गई । इशारा देखते ही शेरसिंह ने राजा गोपालसिंह से कहा, "जल्दी वैसा ही कीजिए जैसा मैना कह रही है, कारण पीछे हम लोग पूछेंगे ।" ताज्जुब करते हुए राजा गोपालसिंह लक्ष्मीदेवी को लिए कोठरी के अन्दर चले गए और पीछे पीछे शेरसिंह ने भी वहाँ पहुँच कर खंजर की रोशनी बुझा दी जिसे वह अब तक किए हुए थे ।

कोठरी में पहुँचते ही शेरसिंह ने मैना से पूछा, "क्या बात है मैना ?" कोठरी में आने का दर्वाजा बन्द करने बाद मैना बोली, "दारोगा और धनपत अभी अभी इसी फाटक के अन्दर गए हैं ।" तीनों आदमी यह बात सुनते ही चमक गए और लक्ष्मीदेवी का कलेजा धड़कने लगा, मगर गोपालसिंह ने शान्ति से पूछा, "और तुम यहाँ कैसे ? चाचाजी और पुजारीजी कैसे हैं ?" मैना बोली, "सब अच्छे हैं और उसी जगह हैं जहाँ आप उन्हें छोड़ आए थे । मुझे बूआजी ने एक काम के लिए भेजा था और मैं बाहर आ तो गई लेकिन फिर लौट कर वहाँ जा न सकी, दर्वाजा

नहीं खुला, इधर उधर भटक रही थी कि वे दोनों नजर आए। डर के मारे यहाँ छिप गई, बस वे फाटक के अन्दर गए और आप लोग पहुँचे हैं, मगर देखिए तो, यह आवाज कैसी है ?

एक तरह की भारी और गूँजने वाली आवाज उस फाटक के अन्दर से आती हुई सुनाई पड़ी जो कुछ ही देर में बहुत बढ़ गई मगर इसे सुनते ही गोपालसिंह के मुँह से निकला, "हैं, यह आवाज तो चक्र चलने की है, तो क्या वे दोनों कम्बख्त वहाँ तक पहुँच गये !" सिर नीचा कर वे कुछ गम्भीर चिन्ता करने लगे। शेर-सिंह ने धीरे से मैना से पूछा, "बूआजी ने ताली देकर तुमको भेजा है ?" मैना बोली, "जी हाँ ताली मेरे पास है—उसी की मदद से मैं तिलिस्म के बाहर निकली थी मगर ताज्जुब है कि लौट नहीं पाती, न जाने क्यों !"

यकायक मैना चमकी और रुक गई। वह आवाज जो सब तरफ फैल रही थी बहुत ज्यादा बढ़ गई और तब अचानक रुक गई। एकदम गहरा सन्नाटा छा गया जिसके अन्दर से किसी के भयानक तौर पर चीखने की आवाज बार बार उठने लगी। उस सन्नाटे में यह चीख की आवाज ऐसी डरावनी मालूम हुई कि सभी का कलेजा दहल उठा और लक्ष्मीदेवी ने काँप कर राजा गोपालसिंह का हाथ पकड़ लिया जिन्होंने दिलासा देने वाले ढंग से उसको अपने बदन से लगा लिया।

किसी तरह के भारी धम्माके की आवाज आई तब ऐसा मालूम हुआ कि वह फाटक खुल रहा है जो पुतली के पीछे था। राजा गोपालसिंह और शेरसिंह ने कोठरी के बाहर झाँक कर देखा और साथ ही ताज्जुब में पड़ गए। फाटक सच-मच खुला और उसके अन्दर से हाथ में रोशनी लिए कोई आदमी लड़खड़ाता हुआ बाहर निकला।

मगर बहुत ही अजीब हालत हो रही थी इस आदमी की। समूचा बदन खून से लथपथ था, चेहरे पर भी खून के छींटे पड़े हुए थे, सूरत से डर और घबराहट टपक रही थी, हाथ पाँव काँप रहे थे।

एक सायत के लिए उसने पीछे घूम कर देखा, न जाने क्या उसकी नजर में आया कि वह बड़े जोर से चिल्ला उठा और तब बेतहाशा दौड़ता हुआ बाहर की तरफ भागा।

जल्दी से शेरसिंह ने मैना से कहा, "यह घनपत है, तुम बूआजी वाली ताली मुझको दो और खूब होशियारी से इसका पीछा करो। जरूर यह कोई खून करके भागा है। किसी बात से डरना नहीं और अगर तिलिस्म में वापस न लौट सको

तो यहीं बाहर ही रुकी रहना, मैं तुमको खोज लूंगा। जाओ जल्दी नहीं निकल जायगा; तिलिस्मी हथियार कोई तुम्हारे पास है न ?"

"हाँ" कह के मैना ने कोई चीज शेरसिंह के हाथ में दी और तब कोठरी के बाहर निकल गई। गोपालसिंह ने शेरसिंह से पूछा, "क्या यह घनपत था ? लेकिन क्या सूरत हो रही थी इसकी !" शेरसिंह बोले, "जरूर वही था और कोई न कोई गजब करके भागा है, मेरा कलेजा उछल रहा है, जल्दी आगे चलिये।" वे वे आगे बढ़े और उनके पीछे लक्ष्मीदेवी का हाथ पकड़े गोपालसिंह चले।

फाटक के पास पहुँचे तो देखा कि वह खुला हुआ है। शेरसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी उसके अन्दर डाली, साथ ही देखा कि भीतर वाली भयंकर मूरत के हाथ आगे को बढ़ रहे हैं और फाटक के पास तक आ पहुँचे हैं। गोपाल-सिंह ने कहा, "तिलिस्मी कार्रवाई जारी है और जरूर इसमें कोई भेद है।" शेर-सिंह ने कहा, "बेशक ऐसा ही है, मुमकिन है दारोगा भी आता हो। आप सम्हले रहिये, मैं भी सब तरह से होशियार हूँ। तिलिस्मी हथियार हाथ में रखिये।" गोपालसिंह ने अपनी तलवार निकाल कर हाथ में ले ली और एक अँगूठा जल्दी से लक्ष्मीदेवी की उँगली में पहिना कर एक खञ्जर उसके हाथ में देते हुए कहा, "इसे लिये रहो न जाने कब क्या हो जाय।"

डरी हुई आवाज में लक्ष्मीदेवी बोल उठी, "ओह, ये हाथ कैसे हैं जो फाटक के बाहर निकल रहे हैं !" सचमुच उस भयानक मूरत के दोनों हाथ बढ़ते हुए अब फाटक के बाहर आ गये थे और मालूम होता था मानों इन लोगों के पास तक पहुँचना चाहते हैं।

शेरसिंह घबरा गये और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये, हट जांय या खड़े रहें, मगर उसी समय गोपालसिंह ने कहा, "जल्दी से दोनों तालियें मुझे दीजिये, अपनी वाली और जो मैना ने दी है वह भी।" बूआजी वाली ताली राजा गोपालसिंह को देकर शेरसिंह ने अपने गले वाली जंजीर निकाली और वह ताली भी उनको पकड़ा दी।

गोपालसिंह को बढ़ता देख लक्ष्मीदेवी डर कर बोली, "हैं हैं, यह आप क्या कर रहे हैं ?" पर वे बोले—"तुम बिल्कुल डरो मत" और तब आगे बढ़ गये। मूरत के दोनों हाथों में मानों देखने की ताकत थी। गोपालसिंह के बढ़ते ही वे इनकी तरफ घूमे, इस तरह पर जैसे दोनों तरफ से पकड़ कर उन्हें दबोच लेंगे। लक्ष्मीदेवी के मुँह से एक चीख निकल गई और शेरसिंह भी घबड़ा कर बोले,

"राजा साहब, राजा साहब, होशियार!" पर राजा गोपालसिंह ने कुछ भी खयाल न किया बल्कि और आगे बढ़े और दोनों हाथों में दोनों तालियाँ पकड़ उन्होंने एक साथ दोनों बढ़े हुए हाथों को हथेलियों के साथ छुला दिया।

तालियों का हथेलियों के साथ सटना था कि एक अजीब तरह की आवाज हुई। मालूम हुआ जैसे वह मूरत हँस रही हो। ऐसी डरावनी यह हंसी थी कि सभी का कलेजा उछल पड़ा। दुबारा हँसी की आवाज आई और तब वे दोनों हाथ पीछे हटते हुए अपने उचित ठिकाने पर पहुँच गए।

अब शेरसिंह और लक्ष्मीदेवी का दिल काबू में हुआ और वे दोनों कुछ और आगे बढ़े। शेरसिंह ने देखा कि वह चक्र जो भयानक मूरत के सामने घूम रहा था अब धीरे धीरे रुक रहा है, राजा गोपालसिंह ने इसी समय कहा, 'जल्दी करो और दोनों आदमी मेरे पीछे पीछे चले आओ।" वे आगे बढ़े और उनके पीछे लक्ष्मीदेवी और शेरसिंह चले। उसी समय एक आवाज आई। घूम कर लक्ष्मीदेवी ने देखा कि वह फाटक जो अब तक खुला हुआ था उनके पीछे बन्द हो रहा है। उसके देखते देखते लोहे का एक मोटा पल्ला जो नीचे जमीन के अन्दर घुसा हुआ था निकला और ऊपर तक बढ़ और डचोढ़ी को पूरी तरह बन्द कर रुक गया। वह कुछ पूछने के लिये गोपालसिंह की तरफ घूमी मगर देखा कि वे आगे बढ़ कर उस मूरत के पास तक पहुँच गए हैं और वहाँ कुछ कर रहे हैं।

राजा गोपालसिंह ने अपने हाथ की ताली मूरत की नाभि में डाली और किसी खास ढंग से घुमाया, तब उसे निकाल दूसरी ताली डाली और उसे भी घुमाया, तब दोनों तालियाँ लिये पीछे हट कर खड़े हो गये।

मूरत का बहुत ही बड़ा पेट दो एक बार जोर से हिला और तब एक हलकी आवाज के साथ दो टुकड़े होकर इस तरह खुल गया जैसे कोई दर्वाजा खुलता है। हाथ के इशारे से गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी और शेरसिंह को अपने पीछे आने को कहा और आप आगे बढ़े। लक्ष्मीदेवी का कलेजा यह देख उछल पड़ा कि वे उस भयानक मूरत के पेट के अन्दर घुस रहे हैं, मगर उसने दिल मजबूत किया और पीछे पीछे चल पड़ी। उसके पीछे शेरसिंह बढ़े और उनके घुसते ही मूरत का पेट जो खुल गया था फिर बन्द हो गया।

हमारे पाठक एक बार गोपालसिंह के साथ इस मूरत के पेट के अन्दर आकर यहाँ की अद्भुत चीजों और कारीगरी की बातों को देख चुके हैं इसलिए उन्हें तो ताज्जुब न होगा पर लक्ष्मीदेवी पहिले पहिल इस जगह आ रही थी इसलिए डर

और घबराहट के साथ मिले आश्चर्य और कौतूहल के भाव से सब तरफ देखने लगी लेकिन जो कुछ उसे दिखाई पड़ा उसने इस कदर ताज्जुब में डाला कि वह अपने को रोक न सकी और आगे बढ़ अपने पति की अंगुली पकड़ के बोली, 'बड़ी डरावनी जगह है! आप क्या पहिले इस जगह आ चुके हैं?" गोपालसिंह ने कहा, "हाँ, इसी जगह से मुझे वह 'पक्षिराज' मिला था। यहाँ से (ऊपर की तरफ उँगली उठा कर) ऊपर निकल कर चाचाजी और पुजारीजी से भेंट हुई थी और यहीं नीचे की तरफ........" गोपालसिंह ने उँगली से नीचे की तरफ दिखाया और साथ ही घबरा कर बोल उठे, "हैं, यह क्या!" उनके साथ साथ लक्ष्मीदेवी और शेरसिंह की निगाह भी नीचे गई और वे भी घबरा कर उधर ही देखने लगे।

नीचे किसी आदमी की लाश पड़ी हुई थी मगर बड़ी भयानक हालत में। उसका हाथ पाँव सिर धड़ सब टुकड़े टुकड़े होकर चारो तरफ फैला हुआ था और खून से सारी जमीन तर हो रही थी। सबसे पहिले लक्ष्मीदेवी की निगाह उसके चेहरे पर गई और वह बोल उठी, "अरे, क्या यह दारोगा है!" शेरसिंह ने भी देखा और कहा, "हाँ वही तो जान पड़ता है, मगर इसकी यह हालत कैसे हो गई! क्या यह धनपत की कर्तूत है?" केवल गोपालसिंह चुपचाप खड़े बड़ी स्थिर दृष्टि से देखते रह गये।

कुछ देर बाद शेरसिंह ने कहा, "क्या हम लोग वहाँ तक पहुँच नहीं सकते?" गोपालसिंह यह सुनते ही चौंके और एक बार गर्दन हिला कर पीछे की तरफ घूमे। किसी जगह पर हाथ रख कर दबाते ही एक छोटा सा रास्ता खुल गया और पतली पतली सीढ़ियाँ दिखाई पड़ने लगीं जिन पर उन्होंने पैर रक्खा और उनके पीछे धड़कते हुए कलेजे के साथ लक्ष्मीदेवी और सबके पीछे शेरसिंह चलने लगे। कुछ ही देर में ये लोग नीचे पहुँच गये जहाँ गोपालसिंह ने एक दूसरा रास्ता पैदा किया और लक्ष्मीदेवी ने देखा कि वह उस कूएँ जैसे स्थान के एक दम तली में पहुँच गई है तथा सामने ही दारोगा की लाश पड़ी हुई है।

मगर क्या ही भयानक हालत हो रही थी इस समय दारोगा की! उसका बदन एकदम इस तरह टुकड़े टुकड़े हो गया था जैसे किसी ने बोटी बोटी काट कर फेंक दिया हो।

तीनों आदमी आगे बढ़े और अपनी तबीयत को सम्हाल गौर से देखने लगे। शेरसिंह के मुँह से निकला, "जरूर धनपत ने ही इसकी यह हालत की है।" राजा

गोपालसिंह ने सिर हिलाया और अपने चारो तरफ दिखा कर कहा, "नहीं, यह तिलिस्मी चक्कर में पड़ गया, इन हथियारों पर लगा खून और माँस देखिये।"

लक्ष्मीदेवी ने देखा कि इस छोटी जगह के चारो तरफ कितने ही तलवार भाले नेजे खुखड़ी खाँड़े नीमचे तथा और भी कितने तरह के हथियार तथा न जाने कैसे कैसे यन्त्र और कल पुर्जे भरे हुए हैं जिनके बीच सिर्फ उतनी ही जगह खुली हुई है जहाँ वे तीनों खड़े हैं या दारोगा की टुकड़े टुकड़े हुई भई लाश पड़ी है। वह डर कर बोली, "क्या ये हथियार चल भी सकते हैं?" गोपालसिंह बोले, "हाँ अगर कोई अनजान आदमी यहाँ पहुँच जाय तो ये चल कर उसके टुकड़े टुकड़े कर देंगे जैसी कि इस पापी की हालत तुम देख रही हो, हाँ अगर कोई जानकार पहुँचे तो वह इन्हें अपने इच्छानुसार चला सकता है।" शेरसिंह बोले, "तो दारोगा के बारे में क्या समझा जाय? वह जानकार था या अनजान?" गोपालसिंह बोले, "अनजान तो किसी तरह नहीं कहा जा सकता। जब यहाँ तक पहुँच गया तो जरूर वह यहाँ की कैफियत भी जानता था, पर कोई भूल कर बैठा और यह नतीजा निकला। अब धनपत कब्जे में आवे तो ठीक पता लगे, क्योंकि जरूर वह भी इसी जगह कहीं मौजूद था जब दारोगा की यह गत हुई।" शेरसिंह बोले, "जी हाँ उसके कपड़ों पर पड़ा हुआ खून इसमें कोई शक रहने नहीं देता।"

इसी समय लक्ष्मीदेवी बोल उठी, "वह क्या चीज चमक रही है!" गोपालसिंह ने ताज्जुब से पूछा, 'कहाँ?" उसने उँगली से बता कर कहा, "वह देखिये उस बाँह के पास।" यकायक शेरसिंह ने एक चीख मारी और झपट के आगे बढ़ कर वह चीज उठा ली जिसे लक्ष्मीदेवी ने बताया था। वह खून में तर थी, कम्बख्त दारोगा के ही कपड़ों से उसे पोछा और तब खूब गौर से देख कर बोले, "राजा साहब, बधाई! बधाई! यह लीजिये वह ताली जिसके बिना सब काम रुका हुआ था।" उन्होंने अपना हाथ आगे बढ़ाया और जो कुछ उस पर दिखाई दिया उसे देख गोपालसिंह के मुँह से भी प्रसन्नता की चीख निकल गई। वह थी पन्ने की एक ताली! काँपते हाथों से गोपालसिंह ने उसे उठा लिया, और माथे से लगा कर कहा, "आह, किस तरह मिली तो यह ताली! मगर यह यहाँ किस तरह आई?" लक्ष्मीदेवी बोली, "जरूर वह अपने साथ इसे लाया होगा।" मगर शेरसिंह ने सिर हिला कर कहा, "यह बात नहीं है, यह देखिये।" झुक कर उन्होंने दारोगा की वह बाँह जिसके नीचे से ताली निकाली थी उठा ली और दिखा कर कहा, "यह देखिये माँस में और चमड़े पर नश्तर का दाग! जरूर कम्बख्त ने

किसी जर्राह की मदद से अपनी बाँह चिरवा कर ताली उसके अन्दर भर रक्खी थी। बाँह कटी तो यह बाहर निकल पड़ी! कम्बख्त जीता रहता तो क्या कभी इस अनमोल चीज का पता लगता!" गोपालसिंह ने भरे गले से कहा, "कभी नहीं!" लक्ष्मीदेवी बोली, "अच्छा ही हुआ कि यह कम्बख्त अपनी जान से गया और यह अनमोल चीज भी मिल गई। अब यह तिलिस्म का चौथा दर्जा...."

यकायक डर कर वह पीछे हट गई। कोई चीज ऊपर से आकर उसके सामने ही गिरी थी। गोपालसिंह ने झुक कर देखा तो वह एक कंकड़ था। ताज्जुब के साथ उन्होंने ऊपर की तरफ देखा और साथ ही चौंक कर बोल उठे, "वाह वाह, वह देखो पुजारीजी वगैरह ऊपर से झाँक रहे हैं। जरूर उन्होंने ही यह कंकड़ फेंका है। (ऊपर की तरफ हाथ उठा कर) चाचाजी, यह ताली मिल गई, मैं अभी आपके पास आया!"

लक्ष्मीदेवी हँस कर बोली "आपकी आवाज वहाँ तक जायगी?" गोपालसिंह बोले, "आवाज नहीं पहुँचेगी तो मैं पहुँचता हूँ। उन तक जाना अब कुछ भी कठिन नहीं है।" और तब पीछे की तरफ हट कर उन्हीं सीढ़ियों पर चढ़ने लगे जिनकी राह यहाँ तक पहुँचे थे पीछे पीछे लक्ष्मीदेवी और शेरसिंह भी जाने लगे।

इतनी ज्यादा सीढ़ियाँ थीं कि चढ़ते चढ़ते लक्ष्मीदेवी हाँफने लगी, पर आखिर किसी तरह उनका सिलसिला खत्म हुआ और सब लोग किसी लम्बी चौड़ी जगह में पहुँच कर रुके। कुछ खटके की सी आवाज आई और यकायक उस जगह चाँदना हो गया। सामने ही पुजारीजी भैयाराजा बहुरानी बूआजी और दामोदरसिंह खड़े नजर आए। गोपालसिंह ने झपट कर बूआजी को वह पन्ने वाली ताली दिखाई और पूछा, "सबसे पहिले यह बताइये यही चौथे दर्जे की ताली है?" उन्होंने ताज्जुब से देख कर पूछा, "यह तुझे कैसे मिली!" गोपालसिंह बोले, "नीचे कम्बख्त दारोगा की लाश पड़ी हुई है। पापी ने अपनी बाँह चीर कर उसके अन्दर इसे भर दिया था. बाँह कटने से बाहर निकल पड़ी?" बूआजी ने ताली पुजारीजी की तरफ बढ़ाई और कहा, "देखिए, आप ही इसे सबसे अच्छी तरह जानते हैं।" पुजारीजी ने ताली को उलट पुलट कर देखा और तब कहा, "बेशक यही वह ताली है जो उस जड़ाऊ डिब्बे के ऊपर जड़ी थी जिसे मैं तुमको देने वाला था कि कम्बख्त दिग्विजय उड़ा ले गया।"

गोपालसिंह की खुशी का ठिकाना न रह गया। उन्होंने पुजारीजी के पैर छूए और भैयाराजा बूआजी और चाचीजी के पैरों को हाथ लगाया। उन सभों ने

उनको कलेजे से लगा कर अपने दुःखदर्द को एक दम भुला दिया। इसके बाद लक्ष्मीदेवी का हाथ पकड़ कर बहुरानी के पैरों पर डालते हुए गोपालसिंह ने कहा "चाचीजी, यह मेरी पत्नी लक्ष्मीदेवी है और वह कम्बख्त हेलासिंह की लड़की मुन्दर थी जिसकी मैंने आपसे शिकायत की थी। दुष्टों ने इस बेचारी को कैद करके उसे इसकी सूरत बना मेरे गले मढ़ दिया था!" बहुरानी ने लक्ष्मीदेवी को अपने कलेजे से चिपकाते हुए कहा, "मैं वह सब किस्सा बूआजी और मैना से सुन चुकी हूँ।"

शेरसिंह ने भी पुजारीजी और बूआजी के पैर छूए और भैयाराजा और दामोदरसिंह को सलाम किया, इसके बाद पुजारीजी से पूछा, "यह आपने क्या कहा कि यह ताली डिब्बे पर जड़ी हुई थी?" पुजारीजी बोले, "जिस डिब्बे के अन्दर तिलिस्मी किताब रहती थी उसी के ऊपर यह चिपकी रहा करती थी। इसको गले में डाल कर घुमाने से उल्लू का पेट खुलता और दूसरी किताब प्रकट होती। उन दोनों किताबों की मदद से तिलिस्म के तीन दर्जे गोपाल ने खोल डाले मगर चौथे दर्जे को केवल यह ताली खोल सकती थी, जो इसी कारण बिना खुले रह गया, अब भाग्यवश यह गोपाल को मिल गई है और जरूर ही अब वह हिस्सा भी टूट जायगा, मगर मैं यह बिलकुल नहीं कह सकता कि यह गोपाल के कब्जे से निकल कर दारोगा के पास कैसे चली गई।"

गोपालसिंह ने इतना सुन अफसोस के साथ कहा, "जिस समय मैं कामेश्वर के साथ आपके यहाँ पहुँचा था और आप वह जड़ाऊ डिब्बा मुझको दे रहे थे, तिलिस्मी भूत बने हुए दिग्विजय ने अलक्ष्य रूप से उसको उड़ा दिया। उससे वह डिब्बा दारोगा ले गया जिसने नन्हों को किसी मतलब से दिया, नन्हों उसे ले मेरी माँ के तोशेखाने में घुसी जहाँ इसी ताली से उसने उस सोने के उल्लू का पेट खोल के उसके भीतर वाली किताब निकाल लेनी चाही, मगर उसी समय मेरी माँ के पहुँच जाने से उसे भाग जाना पड़ा। माँ ने वह उल्लू मय किताब के भूतनाथ को दे दिया। नन्हों को श्यामलाल ने पकड़ा और उस डिब्बे के साथ एक पहाड़ी गुफा में बन्द कर दिया मगर किसी तरह दारोगा को पता लग गया और उसने उनकी मौत जाहिर कर उन्हें तो तिलिस्म में डाल दिया और आप उस डिब्बे पर पुनः कब्जा कर लिया*। जब प्रभाकरसिंह की बदौलत श्यामलाल

* यह सब हाल ऊपर के भागों में हमारे पाठक बहुत खुलासा तौर पर पढ़ चुके हैं।

को छुट्टी मिली तो इन्द्रदेव उनको ले दारोगा के मकान में घुसे और इस डिब्बे को निकाल मेरे पास लाए। उस समय मुझे इस ताली के महत्व का पता न था अतः डिब्बे को तो मामूली तौर पर रख दिया मगर किताब को एक दूसरी गुप्त जगह में छिपा दिया। इसके दूसरे ही दिन मुन्दर की करनी से मुझे मरा मशहूर कर दिया और मेरा दीन दुनिया से रिश्ता छूट गया। मालूम होता है वह डिब्बा दारोगा के हाथ लग गया जो इस ताली का रहस्य जानता था और जिसने इसको ऐसी जगह छिपाया कि इतने दिन बाद उसके मर जाने पर ही अब यह ताली पुनः प्रकट हुई।"

पुजारीजी गोपालसिंह की पीठ पर हाथ फेरते हुए बोले, "खैर कोई बात नहीं, अब मिल गई इतना ही बहुत है। अब तुम इससे काम लो और तिलिस्म का चौथा दर्जा तोड़ उसकी अगाध सम्पत्ति पर कब्जा करो।"

यकायक गोपालसिंह को कुछ याद आ गया। वे घूमे और बूआजी से बोले, "आप क्या सूर्य-मण्डल वाली उस सुरंग में भी गई थीं जहाँ के बारे में मैंने आपसे कहा था?"

बूआजी मुस्कुरा कर बोलीं, "हाँ, मैं वहाँ गई, मैंने उन्हें देखा, और उनसे बातें भी कीं। वे ही हैं जिनका तुमको खयाल हुआ था, पर मैं उन्हें छुड़ा न सकी। उनको छुड़ाना अब तुम्हारा काम है।"

भैयाराजा चौंक कर बोले, "कौन? किसकी बात है!" मगर गोपालसिंह मुस्कुराते हुए बूआजी से बोले, "बूआजी, बताइयेगा नहीं!" बूआजी हँस कर बोलीं, "अच्छा बेटा मैं न बताऊँगी, तुम्हीं वह खुशखबरी इनको देना।"

इसी समय शेरसिंह ने कहा, "धनपत को हम लोगों ने भागते हुए देखा था, खून में एक दम लथपथ था और बड़ा घबड़ाया हुआ था। उसके बारे में आप लोगों को कुछ मालूम है?" बूआजी ने पूछा, "क्या दिग्विजय भी उसके साथ था?" शेरसिंह चौंक कर बोले, "महाराज दिग्विजयसिंह?" बूआजी ने कहा, "हाँ वही, दुष्टों पर दया करने का जो नतीजा निकलता है वही तुम्हारी इस दया का भी हुआ शेरसिंह! न जाने कैसे धनपत गोपाल की कैद से छूट निकला। सबसे पहिला काम उसने यही किया कि तिलिस्म में घुस दारोगा को छुड़ाया, और दारोगा ने दिग्विजय बिहारी हरनाम मनोरमा और बेगम वगैरह को छुट्टी दी....

गोपाल०। (चौंक कर) हैं!

बूआ०। हाँ तुम्हारे वे सब कैदी जो राजा सुरेन्द्रसिंह ने तुम्हारे हवाले किये थे आजाद हो गये, मगर कुशल इतनी ही है कि उनका सिरताज दारोगा कम्बख्त

कुत्तों की मौत मारा गया। उन सभों को छुड़ाने बाद वह हम लोगों को धमकाने और डराने यहाँ आया और (भैयाराजा की तरफ बता कर) इनकी एक बात पर बहुत लाल पीला होकर बोला, "मैं इस इमारत समेत तुम सभी को अभी गारत करता हूँ।" इतना कह वह नीचे उतरा मगर वहीं न जाने क्या गलती उससे हो गई कि तिलिस्मी हथियारों ने उसकी बोटी बोटी काट डाली। दिग्विजय और धनपत भी उसके साथ ही थे जो उसकी यह हालत देख डर के मारे भागे और न जाने कहाँ निकल गये।

शेर०। राजा साहब को तो हम लोगों ने नहीं देखा पर धनपत को जरूर देखा और मैना को उसके पीछे लगा दिया है, जरूर वह उसे गिरफ्तार करेगी।

बूआ०। हाँ लेकिन यदि दिग्विजय के हाथ से बच सकी। वह उस पर बहुत चिढ़ा हुआ है—अगर पा गया तो उसकी बुरी गत करेगा। तुमने मैना को न भेजा होता तभी अच्छा था शेरसिंह!

पुजारी०। खैर जो होगा देखा जायगा। गोपाल, तिलिस्मी किताबों को पढ़ने से इतना तो तुमको मालूम ही हो गया होगा कि चौथा दर्जा खोलना कोई बहुत मुश्किल काम नहीं है, बशर्ते कि उसकी ताली पास में रहे। अब तुम उसी काम में लग जाओ नहीं तो देर करने से फिर न जाने कौन सा नया बखेड़ा आन खड़ा हो। यह शेरसिंह तुम्हारी मदद पर रहेंगे और तुमको दिक्कत न होगी।

भैयाराजा०। मेरी भी यही राय है।

सब लोग बैठ कर सलाह करने लगे कि अब क्या करना चाहिए।

* * *

संध्या होने में अभी कुछ देर है। उस सुन्दर बाग में जिसका नाम हमने फौवारों वाला बाग रख दिया है इस समय बड़ी तैयारी और चहल पहल है। समूचा बाग ऐसा सजा हुआ है कि जान पड़ता है अभी अभी माली लोग इसे संवार और साफ करके हटे हैं। जितने फौवारे हैं सभी चल रहे हैं और उस बारहदरी की छत पर से भी नन्हीं नन्हीं फुहारें गिर कर बरसात का मजा दे रही हैं जिसके अन्दर लक्ष्मीदेवी कमलिनी लाडिली किशोरी और कामिनी इत्यादि बैठी हुई आपस में बातें कर रही हैं।

कमलिनी०। राजा साहब ने बड़ी देर कर दी, दोपहर के बाद ही उनके यहाँ आ जाने की बात थी।

लक्ष्मी०। हाँ न जाने क्या बात है, महीनों बाद सन्देसा भी मिला तो इतनी देरी कर रहे हैं!

लाडिली०। किसी काम में फँस गए होंगे।

किशोरी०। कोई नया बखेड़ा न खड़ा हो गया हो।

कामिनी०। बहिन मैंने तो जब से सुना है कि मैना दिग्विजयसिंह के चंगुल में फँस गई है और शेरसिंह बहुत कोशिश करके भी उसे छुड़ा नहीं पाये हैं मुझे तो न जाने कैसी एक चिन्ता सी होने लगी है।

कम०। चिन्ता की बात ही है, मैना ऐसी लड़की खोजने से नहीं मिलेगी।

लाडिली०। मगर यह है कौन आखिर?

लक्ष्मी०। यह मेरी सास के नैहर की है। इसकी माँ से और मेरी ननिया सास से बड़ा प्रेम था और वह उनके साथ महल ही में ज्यादातर रहा करती थीं। जब इसकी माँ मरी तो मेरी ननिया सास ने इस लड़की को अपने पास रख लिया। सुनते हैं इसका बाप बड़ा भारी ऐयार था और उसी से इसने भी कुछ ऐयारी सीखी थी।

कम०। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि इसे शेरसिंह से बहुत मुहब्बत हो गई है।

लक्ष्मी०। हाँ, मगर वह तो इसकी तरफ खयाल भी नहीं करते हैं।

कामिनी०। नहीं ऐसा तो नहीं है, ऐसा होता तो ऐसे घबराए हुए वह इसकी फिक्र में न चले जाते जैसा हम लोगों ने देखा।

लाडिली०। बेचारी छूट कर आ जाय तो जानें।

किशोरी०। मैंने एक बार सुना था कि........

यकायक किसी विचित्र तरह की आवाज किशोरी के कान में पड़ी और वह ताज्जुब के साथ आसमान की तरफ देखने लगी। कुछ नजर तो न आया पर उस आवाज पर बाकी के लोगों का भी ध्यान गया और वे सब भी आसमान की तरफ देखने लगीं बल्कि लाडिली तो उठ कर बारहदरी के बाहर निकल आई और गर्दन ऊँची करके देखने लगी। आवाज जो कुछ अजीब तरह की थी बढ़ी और साथ ही लाडिली खुश होकर चिल्ला पड़ी—"आ गये! और पक्षिराज पर ही हैं!! बहिन कमलिनी, आओ और देखो, तुम कहती थीं कि ऐसी चिड़िया बन ही नहीं सकती जो आदमी को हवा में उड़ा ले जाय।"

सब औरतें दौड़ कर लाडिली के पास पहुँचीं और आसमान की तरफ देखने लगीं। उनके देखते देखते ही एक बड़ी सी चिड़िया न जाने कहाँ से उड़ती हुई आई और बारहदरी की छत पर बैठ गई। जब उसने अपने बड़े पंख समेटे तो

राजा गोपालसिंह की सूरत नजर आई और लाडिली चिल्ला कर उनसे बोली, "जीजाजी जीजाजी, सबसे पहिले मैं आपके विमान पर चढ़ूँगी ! इन सभों में से सिर्फ मुझे ही विश्वास था कि आपने जो कुछ कहा ठीक कहा और यह पक्षि-राज आदमी को लेकर हवा में उड़ सकता है और बहिन कमलिनी को तो आप एक दफे भी हवा की सैर न कराइयेगा, ये आपको झूठा बता रही थीं।"

थोड़ी ही देर बाद हँसते हुए गोपालसिंह बारहदरी की सीढ़ियों पर दिखाई पड़े। सभों ने उनको इस तरह घेर लिया जैसे मदारी को छोटे बच्चे घेर लेते हैं। विमान के बारे में तरह तरह की बातें सभी उनसे पूछने लगीं मगर लक्ष्मीदेवी ने उनका हाथ पकड़ कर व्याकुलता के साथ पूछा, "उन लोगों का कुछ पता लगा ? क्या आपका शक ठीक था ?"

गोपालसिंह खुशी खुशी बोले, "हाँ, मेरा शक बहुत ठीक था, और केवल मेरे पिता ही तिलिस्म के अन्दर जीते जागते मुझको नहीं मिले बल्कि बूआजी के भाई, रोहतासगढ़ के वृद्ध महाराज त्रिभुवनसिंह भी उन्हीं के साथ मुझको मिले।"

लक्ष्मी० । (चौंक कर) हैं, महाराज त्रिभुवनसिंह भी ! मगर मैं तो किसी को आपके साथ नहीं देखती हूँ ?

गोपाल० । पिटाजी ने चाचाजी (भैयाराजा) से मिलने की जिद्द की, लाचार उनको वहाँ ले जाना पड़ा जहाँ बाकी के सब लोग थे और वहाँ एक नया गुल खिला।

सब० । सो क्या ?

गोपाल० । महाराज त्रिभुवनसिंह ने हमारे पुजारीजी को पहिचान लिया और तब हम लोगों को मालूम हुआ कि वे कोई साधु हैं न पुजारी बल्कि बूआजी के पति, पद्मपुर के राजा त्रैलोक्यविक्रम हैं जो ब्याह के मड़वे से निकल कर जंगल में चले गये और साधु हो गए थे।

लक्ष्मी० । हैं, हमारे पुजारीजी बूआजी के पति हैं !

कम० । इतना तो मैंने एक दफे शेरसिंह से सुना था कि बूआजी के पति का अपने ससुर यानी बूआजी के पिता से मड़वे में ही कोई झगड़ा हो गया और वे वहीं से साधु होकर निकल गए थे, पर वे यही पुजारीजी थे इसका हम लोगों को गान गुमान भी नहीं हो सकता था !

गोपाल० । चाचाजी (भैयाराजा) को यह बात मालूम थी पर वे छिपाये हुए थे। उस जगह उन्होंने महाराजा त्रिभुवनसिंह से कुछ इशारा कर दिया और उनके बताने से सभी लोगों ने उनको पहिचान लिया। इस समय वे लोग बातचीत में

इतने मग्न हैं कि लाचार सभों को वहीं छोड़ मुझको अकेला यहाँ आना पड़ा क्योंकि मुझे अन्देशा हुआ कि शायद तुम लोग घबड़ाती न हो।

कम० । बेशक हम लोगों को बहुत चिन्ता हो रही थी मगर अब वह खुशी में बदल गई। अब आप यह कहिये कि हम लोगों को उनके पास कब ले चल रहे हैं।

गोपाल० । जाने किस जरिये से खबर पा कर महाराज बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह और इन्द्रदेव भी वहाँ पहुँच गये हैं और उनकी इच्छा से पिताजी ने तुम सभों को वहीं बुलाया है, इसलिए मैं अपने विमान पर आया हूँ कि तुम्हें भी हवा की सैर करा दूँ, क्योंकि फिर न जाने कब इसका मौका मिले।

कम० । क्यों क्यों, सो क्यों ?

गोपाल० । चाचाजी ने न जाने क्यों विमान पर चढ़ने से मुझको मना कर दिया है।

कम० । मना कर दिया ! इसका क्या सबब !

गोपाल० । अब यह तो वे ही जानें !

लाडिली० । खैर हम सभों को तो आप अपने विमान पर ले चलिये पर बहिन कमलिनी को पैदल ही वहाँ तक दौड़ाइये। ये उसके होने पर विश्वास ही नहीं कर रही थीं।

कम० । अच्छा अच्छा, तू ही हवा में उड़, मैं पैदल ही जाऊँगी और चाचाजी से उसे अपने लिए माँग लूंगी।

किशोरी० । हाँ इसी बात को सोच कर शायद उन्होंने पहिले ही से राजा साहब को मनाही कर दी होगी कि कहीं कमलिनी उसे छीन न ले।

किशोरी की बात पर सब हँस पड़ी और गोपालसिंह भी मुस्कुरा दिये। तब उन्होंने पूछा, 'अच्छा शेरसिंह या मैना का कोई हाल तुम लोगों को मिला ?"

लक्ष्मी० । सिवाय इसके कुछ नहीं कि मैना दिग्विजय के फेर में पड़ गई है। शेरसिंह उसको खोजने जब से गए फिर लौट के हम लोगों से नहीं मिले !

गोपाल० । अफसोस, कम्बख्त दिग्विजय उस बेचारी की दुर्दशा कर देगा। उसे उस पर बड़ी खार है। तुमने मेरे ऐयारों को उस काम पर लगा दिया है जो मैं बता गया था ?

लक्ष्मी० । जी हाँ, हमारे सब ऐयार उसी काम पर हैं और गौतम ने तो बिहारीसिंह और मनोरमा का कुछ पता भी लगाया है पर पूरी सफलता अभी तक किसी को नहीं मिली है।

कम० । अच्छा वह सब आप पीछे पूछते रहियेगा, इस समय तिलिस्म का

हाल कुछ हम लोगों को सुना दीजिये कि इतने दिन कहाँ रहे क्या किया और क्या क्या माल मारा ? और तब यह बताइये कि आपके पिताजी तथा महाराज त्रिभुवनसिंह जीते कैसे बच गये ?

गोपाल० । यह सब उसी दारोगा की करतूत है और मैं तुम लोगों से सब कुछ कहूँगा मगर इस समय केवल इतना ही सुनो कि पिताजी को तिलिस्म ही में से—जब वे मालती का किस्सा सुन रहे थे, बूढ़ा कैदी बन कर वह कम्बख्त उठा ले गया* और उसी जगह बन्द कर गया जहाँ वे मिले, और महाराज त्रिभुवन-सिंह के साथ दिग्विजय ने उसी की सलाह से ऐसी करतूत की । उन्हें तो बेहोश कर तिलिस्म में पहुँचा दिया और एक मुर्दे को रंग रंगा कर उनकी जगह रख दिया । अच्छा बस अब चलो, पिताजी का बड़ा कड़ा हुक्म है कि जा के फौरन सब लोगों को यहीं ले आओ, अस्तु पहिले तुम लोग वहीं चलो और वहीं सब किस्सा भी सुनना, क्योंकि जहाँ तक मैं समझता हूँ अभी न तो वे ही लोग तिलिस्म के बाहर निकलेंगे और न हमीं जल्दी बाहर आने पावगे ।

लक्ष्मी० । क्यों ऐसा क्यों ।

गोपाल० । पिताजी को दुनिया से एक दम ही नफरत हो गई है, कहते थे मैं इस पापी संसार का मुँह नहीं देखना चाहता, और चाचाजी की भी कुछ ऐसी ही राय है । खैर अब चलो, देरी न करो, जो कुछ पूछना होगा वहीं पूछना ।

सभों को लिए हुए गोपालसिंह बारहदरी की छत की तरफ चल पड़े ।

❀

प्रिय पाठक महाशय, हमारा यह किस्सा यहीं समाप्त होता हैं और हम आपसे बिदा लेते हैं ।

शेरसिंह मैना दिग्विजयसिंह, धनपत या मनोरमा आदि का फिर क्या हुआ यह हमें अभी तक मालूम नहीं हुआ, लेकिन अगर कभी मालूम पड़ा तो आपके सामने जरूर पेश करेंगे फिलहाल वह सब जाने बिना पाठकों का कोई हर्ज भी नहीं है ।

॥ शुभम् ॥

* देखिये भूतनाथ बारहवाँ भाग, तीसरे बयान का अन्त ।

पृष्ठ ७ पर छपे यंत्र का मतलब

यह यंत्र शतरंज के घोड़े की चाल पर बना है । शतरंज के शौकीन तो इसका अर्थ सहज ही में जान लेंगे पर औरों के लिए हम इसका मतलब नीचे देते हैं—

३४	४९	२२	११	३६	३९	२४	१
२१	१०	३५	५०	२३	१२	३७	४०
४८	३३	६२	५७	३८	२५	२	१३
९	२०	५१	५४	६३	६०	४१	२६
३२	४७	५८	६१	५६	५३	१४	३
१९	८	५५	५२	५९	६४	२७	४२
४६	३१	६	१७	४४	२९	४	१५
७	१८	४५	३०	५	१६	४३	२८

(शतरंज का घोड़ा बिसात के चिह्न १ वाले खाने से प्रत्येक बार ढाई घर पर चलता हुआ पूरे चौसठों खाने में उपरोक्त ढंग से घूम आता है)

अर्थ

"जो ताली पुतली के हाथ से तुमको मिली है उसे एक सूत में बाँध उस पहाड़ के चारो तरफ घूमो जिस जगह वह जमीन से चिपक जाय उधर ही से भीतर घुसो ।"

१३ वां संस्करण] १९८९ ई० [२२०० प्रति

लहरी प्रेस, वाराणसी ।